संपादक

डॉ. प्रमोद परदेशी (एम.ए., बी.एड., नेट, पीएच.डी.)

डॉ. प्रमोद परदेशी रयत शिक्षण संस्था के दादा पाटील महाविद्यालय, कर्जत, जिला – अहिल्यानगर के हिंदी विभाग में सहयोगी अध्यापक एवं हिंदी विभागाध्यक्ष हैं। वे पिछले १५ वर्षों से हिंदी भाषा एवं साहित्य के क्षेत्र में कार्यरत हैं और सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे के अंतर्गत पीएच.डी. शोध निर्देशक के रूप में कार्यरत हैं। अब तक उनके २१ शोध पत्र प्रकाशित हो चुके हैं तथा १० शोध पत्र राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठियों में प्रस्तुत किए हैं। उन्होंने २ पुस्तकें लिखी हैं- "सुरेश शुक्ल चंद्र व्यक्तित्व और कृतित्व" (२०२१) तथा "सुरेश शुक्ल चंद्र के नाटकों में चिंतन के विविध आयाम" (२०२३)। इसके अलावा उन्होंने २ पुस्तकों का संपादन किया है - "२१वीं सदी के कथा साहित्य में चित्रित परिवर्तित जीवन मूल्य" (२०१५) और "आधुनिक भारत के निर्माण में राष्ट्रीय एवं आंतरराष्ट्रीय हस्तियों का योगदान" (२०२५)। उनके शैक्षणिक योगदान को देखते हुए उन्हें उत्कृष्ट हिंदी अध्यापन सेवा कार्य गौरव पुरस्कार (२०२२, ज्ञानज्योति बहुउद्देशीय संस्था, टाकळी भान, श्रीरामपुर) तथा साने गुरुजी आदर्श शिक्षक पुरस्कार (२०२३, राष्ट्रीय बंधुता साहित्य परिषद, पुणे) से सम्मानित किया गया है।

डॉ. वैशाली विठ्ठल खेडकर (एम.ए., सेट, नेट, पीएच.डी.)

डॉ. वैशाली विठ्ठल खेडकर रयत शिक्षण संस्था के महात्मा फुले महाविद्यालय, पिंपरी, पुणे के हिंदी विभाग में सहयोगी अध्यापक के रूप में कार्यरत है। स्नातक की उपाधि लोकनेते रामदास पाटील धुमाळ कला,वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय,राहुरी से तथा एम.ए.,पीएच.डी की उपाधि सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय,पुणे से प्राप्त की है। इन्होंने सेट और नेट (JRF)की परीक्षा भी उत्तीर्ण की है। इन्होंने विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय एवं राज्यस्तरीय संगोष्ठियों में आलेख वाचक के रूप में सहभाग लिया है। इनके शोधदिशा, समीचीन, शोध धारा, संकल्प, अक्षरा, राष्ट्रवाणी, कला सरोवर आदि पत्र-पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित है। 'हिंदी साहित्य के बदलते सरोकार', 'नाटककार मोहन राकेश और 'हिंदी उपन्यास साहित्य' एवं 'स्त्री आत्मकथा के बहाने' नामक किताबें प्रकाशित है। सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे और कर्मवीर भाऊराव पाटील महाविद्यालय, पंढरपूर (स्वायत्त) के हिंदी अध्ययन मंडल (BOS) सदस्य के रूप में और सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे के अंतर्गत पीएच.डी. शोध निर्देशक के रूप में भी कार्यरत हैं।

डॉ. अलका ज्ञानेश्वर घोडके (एम.ए., बी.एड., सेट, नेट, पीएच.डी.)

डॉ. अलका ज्ञानेश्वर घोडके रयत शिक्षण संस्था के कला व वाणिज्य महाविद्यालय, माढा, जिला - सोलापूर में सहाय्यक अध्यापिका एवं हिंदी विभागाध्यक्षा हैं। पीछले ८ वर्षों सें हिंदी भाषा और साहित्य की एक समर्पित शिक्षिका, शोधकर्ता और संपादक हैं। अब तक उनके २० शोध पत्र विभिन्न राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके है, जिनमें विविध साहित्यिक और सामाजिक विषयों पर गहन अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। उनकी संपादित कृतियों में "हिंदी व मराठी साहित्य में मानव मूल्य" (आयुषी प्रकाशन, लातूर, २०२४) और "महर्षी वार्षिक विशेषांक" (प्रिंट ओम ऑफसेट, सातारा, २०२४) विशेष रूप से सराही गई हैं। डॉ. घोडके के शैक्षणिक और सामाजिक कार्यों को विभिन्न संस्थाओं द्वारा सम्मानित किया गया है। उन्हें राज्यस्तरीय डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम राष्ट्र उभारणी प्रेरणा पुरस्कार (२०२४, ड्रीम फाउंडेशन) तथा राज्यस्तरीय राष्ट्रमाता जिजाऊ व क्रांतीज्योती सावित्रीबाई फुले समाजभूषण पुरस्कार (२०२५) प्राप्त हुए हैं। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी उनके योगदान को मान्यता मिली है, और उन्हें डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर आंतरराष्ट्रीय पुरस्कार (२०२५, मानवतावादी बहुउद्देशीय संस्था, बैंकॉक, थायलंड) से सम्मानित किया गया है।

Nature Light Publications

309 West 11, Manjari VSI Road, Manjari Bk., Haveli, Pune- 412 307.

Website: www.naturelightpublications.com

Email: naturelightpublications@gmail.com

Contact No: +919822489040 / 9922489040

ISBN: 978-93-49938-50-2

Price- 720/-

आधुनिक हिंदी साहित्य में पर्यावरण चेतना

डॉ. प्रमोद परदेशी

डॉ. वैशाली खेडकर

डॉ. अलका घोडके

अंतर्राष्ट्रीय संपादित पुस्तक

ISBN: 978-93-49938-50-2

आधुनिक हिंदी साहित्य में पर्यावरण चेतना

संपादक

डॉ. प्रमोद परदेशी

डॉ. वैशाली खेडकर

डॉ. अलका घोडके

Nature Light Publications

अंतर्राष्ट्रीय संपादित पुस्तक ISBN-978-93-49938-50-2

आधुनिक हिंदी साहित्य में पर्यावरण चेतना

संपादक

डॉ. प्रमोद परदेशी

हिंदी विभागाध्यक्ष तथा अनुसन्धान केंद्र प्रमुख
रयत शिक्षण संस्था का
दादा पाटील महाविद्यालय कर्जत, जिला– अहिल्यानगर, ४१४४०२।

डॉ. वैशाली खेडकर

सहयोगी अध्यापिका
हिंदी विभाग
रयत शिक्षण संस्था का
महात्मा फुले महाविद्यालय, पिंपरी, पुणे।

डॉ. अलका घोडके

सहाय्यक अध्यापिका एवं हिंदी विभागाध्यक्षा
रयत शिक्षण संस्था का
कला व वाणिज्य महाविद्यालय, माढा, जिला- सोलापुर
(सलग्न पु. अ. हो. सोलापुर विश्वविद्यालय, सोलापुर, महाराष्ट्र, भारत।)

प्रकाशक

नेचर लाइट पब्लिकेशन्स, पुणे

© संपादक के अधिकार सुरक्षित

आधुनिक हिंदी साहित्य में पर्यावरण चेतना

संपादक

डॉ. प्रमोद परदेशी

डॉ. वैशाली खेडकर

डॉ. अलका घोडके

प्रथम संस्करण: अगस्त, 2025

अंतर्राष्ट्रीय संपादित पुस्तक

ISBN- 978-93-49938-50-2

प्रकाशक:

नेचर लाइट पब्लिकेशन्स, पुणे (अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशक)

309 वेस्ट 11, मांजरी व्ही. एस. आई. रोड, मांजरी बु.,

हवेली, पुणे – 412 307

वेबसाइट: www.naturelightpublications.com

ईमेल: naturelightpublications@gmail.com

संपर्क क्रमांक: +91 9822489040 / 9922489040

संपादक/सह-संपादक/प्रकाशक पुस्तक के अध्याय/लेख में व्यक्त मौलिकता और विचारों के लिए उत्तरदायी नहीं होंगे। पुस्तक के अध्याय अथवा लेख में प्रस्तुत मौलिकता और विचारों के लिए केवल लेखक ही पूर्णतः उत्तरदायी होंगे।

भूमिका

मानव सभ्यता के विकास का इतिहास प्रकृति के साथ उसकी गहरी सहभागिता का इतिहास है। मानव जीवन की सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक समृद्धि का मूल स्रोत प्रकृति ही रही है। पर्वत, नदियाँ, वन, पशु-पक्षी और ऋतुचक्र – इन सबने मिलकर मानव समाज को जीवन के लिए आवश्यक साधन प्रदान किए हैं। किंतु वर्तमान युग में, विशेषतः औद्योगिक क्रांति के बाद, मनुष्य ने अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन किया है। परिणामस्वरूप प्रकृति का संतुलन बिगड़ गया है और पर्यावरण प्रदूषण आज वैश्विक चिंता का गंभीर विषय बन गया है।

प्रकृति के इस असंतुलन के कारण जलवायु परिवर्तन, ऋतुचक्र में अनियमितता, सूखा, बाढ़, वैश्विक ऊष्मीकरण और प्राकृतिक आपदाएँ बार-बार सामने आ रही हैं। भौतिकवादी जीवन दृष्टिकोण अपनाने वाले मनुष्य ने केवल स्वयं को ही संकट में नहीं डाला है, बल्कि संपूर्ण जैविक जगत को भी खतरे में डाल दिया है। शहरीकरण, औद्योगीकरण और यांत्रिकीकरण की अनियंत्रित प्रक्रियाओं ने वायु, जल, भूमि, वनस्पति और जीव-जंतुओं के अस्तित्व को भी चुनौती दी है। प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक दोहन से जैव विविधता में कमी आ रही है, और पर्यावरणीय असंतुलन दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है।

इन चुनौतियों का सामना करने के लिए विश्वभर में अनेक सामाजिक आंदोलनों और पर्यावरणीय अभियानों का उदय हुआ। भारत में चिपको आंदोलन, नर्मदा बचाओ आंदोलन जैसे प्रयास इस जागरूकता के प्रतीक हैं। यह स्पष्ट है कि मानव समाज को अपनी जीवनशैली और विकास की दिशा पर पुनर्विचार करने की आवश्यकता है।

आधुनिक हिंदी साहित्य ने भी इस संकट को गहराई से महसूस किया है और इसे अपनी सृजनशील अभिव्यक्तियों में स्थान दिया है। आधुनिक साहित्य में प्रकृति का चित्रण केवल सौंदर्य-आस्वाद तक सीमित नहीं है, बल्कि यह चेतावनी भी देता है कि यदि मानव ने अपनी आदतें नहीं बदलीं तो उसका अस्तित्व ही खतरे में पड़ सकता है। यह साहित्य मनुष्य और प्रकृति के सह-अस्तित्व

की आवश्यकता को रेखांकित करता है।

इस पुस्तक का उद्देश्य यही है कि पाठक को यह समझाया जाए कि प्रकृति का संरक्षण केवल पर्यावरणीय सरोकार नहीं है, बल्कि यह मानव जीवन की स्थिरता, सामाजिक समरसता और सांस्कृतिक समृद्धि के लिए अनिवार्य है। पुस्तक में प्रस्तुत विचार यह स्पष्ट करते हैं कि मनुष्य को अपनी जीवनशैली में संतुलन स्थापित कर प्रकृति के साथ सहयोगात्मक संबंध बनाए रखना चाहिए। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक पाठकों में पर्यावरण के प्रति गहरी संवेदनशीलता जागृत करेगी और उन्हें यह सोचने के लिए प्रेरित करेगी कि स्थायी विकास और हरित भविष्य के लिए किन प्रयासों की आवश्यकता है।

संपादक

आधुनिक हिंदी साहित्य में पर्यावरण चेतना

विषय-सूची

अध्याय क्र.	शीर्षक /लेखक	पृष्ठ संख्या
1	एकांत श्रीवास्तव के काव्य साहित्य में प्रकृति चेतना **डॉ. प्रमोद परदेशी**	01 - 05
2	निशांत जैन की कविताओं में पर्यावरण चेतना **डॉ. अलका घोडके**	06 - 14
3	जयशंकर प्रसाद के 'कामायनी' में पर्यावरण चेतना **डॉ. देशपांडे आर. के.**	15 - 18
4	निशला के काव्य में प्रकृति चित्रण **डॉ. सारिका आप्पा भगत**	19 - 26
5	'आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी' के निबंधों में पर्यावरण चेतना **डॉ. एन. बी. एकिले**	27 - 36
6	हिंदी साहित्य में पर्यावरण के प्रति संवेदनशिलता **प्रा. तेजश्री मुरकुटे**	37 - 46
7	'हिंदी साहित्य में पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता **श्रीमती ऋजुता हेमंत चतुर**	47 - 52
8	ज्ञानेन्द्रपति की 'नदी और साबुन' कविता में पर्यावरण चेतना **प्रा. कांबळे राहुल सोपान**	53 - 57
9	'पुनरावृत्ति' मे अभिव्यक्त प्रकृति चित्रण **प्रा. मेघा बाबासाहेब तळपे**	58 - 63
10	आधुनिक हिंदी कविता में पर्यावरण चेतना **प्रा. सावित्री सूर्यकांत मांढरे**	64 - 73

11	वर्तमान हिंदी कविता में पर्यावरण चेतना **प्रा.बालाजी सूर्यवंशी**	74 - 82
12	आधुनिक हिन्दी कहानी साहित्य में पर्यावरण चेतना **कुणाल भूषण**	83 - 92
13	सुषमा मुनींद्र की 'इस्तेमाल' कहानी में पर्यावरण चेतना **अश्विनी भानुदास आढवळकर**	93 - 96
14	बाल साहित्य की भूमिका और प्रकृति प्रेम का महत्व **आशा अरुण पाटील**	97 - 104
15	'आधुनिक हिंदी काव्य साहित्य में पर्यावरण चेतना **शारदा अर्जुन खोमणे**	105 - 111
16	विनोद कुमार शुक्ल के उपन्यास "दीवार में एक खिड़की रहती थी" में पर्यावरण चेतना **किरण पुणेकर**	112 - 123

एकांत श्रीवास्तव के काव्य साहित्य में प्रकृति चेतना

डॉ. प्रमोद परदेशी

हिंदी विभागाध्यक्ष तथा अनुसन्धान केंद्र प्रमुख

दादा पाटील महाविद्यालय कर्जत, जिला–अहिल्यानगर, ४१४४०२

मनुष्य समाजशील प्राणी है। वह समाज में अपने परिवेश से असंख्य अनुभूतियाँ ग्रहण करता है। उसें संचित करता है। ज्ञान और अनुभूतियों के ग्रहण से उसे नयी सूचनायें तथा जानकारी मिलती है। उससे सही और गलत का बोध होता है। यह अंतर्मन का जागृत और सचेत होना ही चेतना का जागृत होना है। मनुष्य अपने ज्ञान को साझा करके अन्य लोगों को सचेत कर देता है। इस चेतना जागृति के लिए वह मौखिक तथा लिखित साधनों का इस्तेमाल करता है।

कोई भी साहित्यकार जिस परिवेश से आता है, उस परिवेश से अनेक अनुभूतियां संचित करता है। साहित्यकार के संचित अनुभूतियो का अभिव्यक्त लिखित रूप साहित्य होता है। जो साहित्यकार अधिक संवेदनशील होता है, उसकी अनुभुतियाँ अधिक गहन होती है। वह अपने संचित अनुभुतियाँ को साहित्य की विविध विधाओं के मध्यम से अभिव्यक्त करता है। वस्तुतः उसकी भावनायें अंतर्तत्व होती है। वह उन भावनाओंको प्रभावशाली रूप से अभिव्यक्त करने के लिए उचित रूप का चयन करता है। प्राकृतिक परिवेश से आनेवाला साहित्यकार प्राकृतिक समस्याओं के प्रति अधिक सजक होता है।

एकांत श्रीवास्तव प्रकृति से जुडे साहित्यकार है। प्रकृति ही उनके साहित्य की आत्मा है। वे प्रकृति के प्रति इतने संवेदनशील है कि, उनके 'अन्न है मेंरे शब्द', 'मिट्टी से कहुंगा धन्यवाद', 'बीज से फूल तक' काव्य संग्रह के नाम भी प्राकृतिक है। उनकी कविताओं में मनुष्य का प्रकृति से संबंध, प्रकृति प्रेम, पर्यावरण की समस्या और चिंता अभिव्यक्त हुई है।

ISBN-978-93-49938-50-2

एकांत श्रीवास्तव का प्रकृति के प्रति गहरा लगाव है। उसमें पेड, फूल, पानी, पक्षी, पहाड, नदी, बसंत, अन्न, बारहमासा आदि प्राकृतिक तत्वों का चित्रण कविता में करते है। बसंत ऋतू में प्राकृतिक परिवेश का चित्रण करते हुए वे लिखते है

"बसंत यानी बरसो बाद मिले
एक प्यारे दोस्त की धौल
हमारी पीठ पर
बसंत यानी एक अद्द दाना
हर पक्षी की चोंच में दबा
वे इसे ले जायेंगे हमसे भी पहले
दुनिया के दूसरे कोने तक।"[1]

एकांत श्रीवास्तव प्रकृति के साथ मनुष्य का गहरा अंतर्संबंध होने की पहचान और एहसास करा देते है। प्रकृति के बिना मनुष्य का जीवन शुन्य है, प्रकृति ही मनुष्य का जीवन है। प्रकृति का ऋतुचक्र मनुष्य के लिए अत्यंत आवश्यक है। अगर प्रकृति को हानि होती है तो मनुष्य का जीवन भी खतरे में आ जाता है। इसलिये प्रकृति को बचाये रखने का आवाहन 'नागरिक व्यथा' कविता में करते हुए लिखते है।

"किस ऋतु का फूल सुन्घू
किस हवा में सांस लूँ
किस दली का सेब खाऊँ
किस सोते का जल पिऊँ
पर्यावरण वैज्ञानिको!
कि बच जाऊ।"[2]

मनुष्य को प्रकृति से बारहमास के हर ऋतु में फल, फूल, हवा, अन्न, पानी आदि मिलता है। इन प्राकृतिक तत्वों से ही मनुष्य का जीवन है। उन्हें बचाकर रखना मनुष्य के जीवन को बचाये रखना है। एकांत श्रीवास्तव प्रकृति के महत्व को प्रतिपादित करते है। मनुष्य समाज में अव्यवस्था, आतंकवाद, संप्रदायिकता आदि समस्याओं से ऊब चुका है।

इस अवस्था से बहर निकलकर मनुष्य प्राकृतिक परिवेश में सुकून महसूस करता है। जंगल, पेड, पौधे, पंछीयों की आवाज, फुलों की गंध आदि में अपनी उदासी मिटाकर प्रसन्न और खुश हो जाता है। वे कहते है

"तुम जहाँ सुनना चाहते थे चीख
वहां मैंने सुनने की कोशिश की
एक चिडिया की आवाज।"[3]

एकांत श्रीवास्तव को भोर का समुद्र सबसे प्रिय लागता है। जो एक हवन कुंड की तरह है और जिसके उठते हुए धुए से सारा आकाश एकाकार हो जाता है। मानो ऐसा लगता है जैसे कोई संत साधना कर रहा हो। उसमें पूरब से जल गिरकर वंदन करता हो और उठनेवाली लहरे मंत्रोच्चार करती है। भोर के समुद्र की प्राकृतिक छवि अंकित करते हुए कवि कहते है,

"एक बहुत बडा हवन कुंड है भोर का समुद्र
जिसमे उठते धुए से
एकाकार हो गया है आकाश
एक संत का अनुष्ठान
कि जल में गिरता है पूरब का वंदन
मंत्र पुष्ट उठता है जल
हाहाकार है जल का मंत्रोच्चार।"[4]

कवि एकांत श्रीवास्तव वर्तमान में मनुष्य के कठोर, हिंसक और अमानवीय व्यवहार से अधिक चिंतित है। अपने स्वार्थ के लिए मनुष्य का प्रकृति पर अतिक्रमण कवि को सबसे बडा खतरा लगता है। मनुष्य की हिंसक प्रवृत्ति ने प्रकृति को हानि पहुँचाई है। उससे प्राकृतिक प्रजातियाँ विलुप्त हो रही है। मनुष्य के इस निर्मम खेल के कारण अनेक पशु, पंछी, पेड आदि समाप्त हो रहे है। इससे बडी समस्या पानी, हवा और जमीन की तैयार हो रही है। इसलिए जल, जंगल और जमीन को बचाए रखना मनुष्य की सबसे बडी जिम्मेदारी है। वे कहते है –

ISBN-978-93-49938-50-2

"थोडी सी हवा मेरे लिए बही
कुछ बादल बरसे
थोडा सा आकाश मिला
थोडी सी धूप
कुछ दु:ख मुझे मिले
धूल में छिपे काँटो की तरह
ख़ुशी यह है कि
जैसे माँ बचाकर रखती है पकवान
इस पृथ्वी ने बचाकर रखी
मेरे लिए थोडी सी जगह।"[5]

वर्तमान समय में मनुष्य विकास के नाम पर प्रकृति को हानि पहुँचा रहा है। उससे प्राकृतिक सौंदर्य समाप्त हो रहा है। औद्योगिकीकरण, भौतिकवाद और आधुनिकीकरण ने ऋतूचक्र में होनेवाले प्राकृतिक परिवर्तन को मानो रोक दिया है। बसंत ऋतू मनमोहक प्राकृतिक सौंदर्य का अब कोई महत्व नही रहा है। 'बसंत' कविता में कवि लिखते है –

" ऋतूओं की महक घिर गई है
केमिकल्स की गंध से
कच्चे घरों की खपरेलों से उठता धुँवा
घिर गया है बारूद के धुँए से
दु:स्वप्नो से घिर गई है नींद
कब कहाँ जाऊँ।"[6]

निष्कर्ष

कहा जा सकता है कि एकांत श्रीवास्तव आधुनिक काल के संवेदनशील कवि है। वर्तमान समय में आधुनिकीकरण, औद्योगिकीकरण और बाजारवाद के युग में अपनी प्राकृतिक चेतना को जागृत रखकर मनुष्य को प्रकृति के महत्व के बारे में वे अपनी

कविताओं के माध्यम से सचेत करते है। प्रकृति का मनुष्य के साथ रागात्मक अंतर्संबंध बताते हुए मानवीय जीवन की स्थिरता, सामाजिक समरसता, सांस्कृतिक सम्पन्नता और भविष्य के लिए प्राकृतिक तत्वो को जीवित रखने का अवाहन करते है।

संदर्भ

1. अन्न है मेरे शब्द, (बसंत) एकांत श्रीवास्तव, पृ.२
2. नागरिक व्यथा, नागरिक व्यथा, पृ. १०४
3. मिट्टी से कहूँगा धन्यवाद, एकांत श्रीवास्तव, पृ. ७३
4. बीज से फूल तक, एकांत श्रीवास्तव, पृ. १०२
5. मिट्टी से कहूँगा धन्यवाद, एकांत श्रीवास्तव, पृ. २९
6. बीज से फूल तक, एकांत श्रीवास्तव, पृ. ९५

ISBN-978-93-49938-50-2

निशांत जैन की कविताओं में पर्यावरण चेतना

डॉ. अलका घोडके

हिंदी विभागाध्यक्ष

कला व वाणिज्य महाविद्यालय, माढा, जिला- सोलापुर, सलग्न पु. अ. हो. सोलापुर विश्वविद्यालय , सोलापुर, महाराष्ट्र, भारत।

शोधसार

स्वस्थ पर्यावरण सजीव सृष्टी के लिए जीवनदायक होता है। सदियों से लेकर आज तक पर्यावरण के कारण ही मनुष्य, जीव-जंतु, पेड़-पौधे अपना जीवन सुख से जी रहे हैं। औद्योगिक विकास और बढ़ते नगरीकरण पर्यावरण विनाश के कारण है। प्रकृति का शोषण सबसे अधिक मनुष्य की लालची प्रवृत्ति के कारण ही हो रहा है। औद्योगिक विकास और आधुनिकीकरण के नाम पर मशीनीकरण बढ़ रहा है। पेट्रोल, डीजल, केरोसिनवाले यातायात के साधन तेज रफ्तार से रास्ते पर दौड़ रहे हैं। जिससे निकला हुआ धुआं सभी के लिए घातक है। परिवेश में कार्बन डाइऑक्साइड, मेथेन, एथेन, क्लोरोफ्लोरोकार्बन जैसे प्राणघातक वायु का मात्रा बढ़ रही है। रास्ते पर शोरगुल, हॉर्न के आवाज ध्वनि प्रदूषण को बढ़ा रहे हैं। कारखानों से निकलनेवाला रसायनों से युक्त गंदा पानी नदियों में छोड़ा जाता है। जिससे नदियों का जल प्रदूषित हो रहा है।नदी में रहने वाले जलचर, जलपर्णी आदि की प्रजातियाँ नष्ट हो रही है। नदियों के दूषित जल से मानव और पशु-पंछियोंका जीवन खतरे में है। जल-जंगल- जमीन, आसमान ये सारे पर्यावरण के घटक है।

पर्यावरण का प्रत्येक घटक संकट में है। मृदा अपरदन, बाढ़, आँधी भूस्खलन, जंगलों में आग, त्सुनामी, असमय वर्षा, बादलों का फटना, येसारे मनुष्य के स्वार्थ और लालच के ही नतीजे है, जिसे हम कुदरत का कहर कहते हैं।

मनुष्य अपराध और गलतियाँ करता है जिसका परिणाम वह खुद भोग रहा है लेकिन उन जीव-जंतु, पशुओं का क्या दोष जो पर्यावरण के असंतुलन के कारण अपना

सुख- चैन और जान भी गवाँ रहे हैं। साहित्य मनुष्य की आँखें खोलने का काम करता है। देश को आजादी दिलाने में भी कलम ने महनीय कार्य किया है।

कल महुत ही ताकतवार होती है। पुरे विश्व पर मंडरानेवाला ग्लोबलवार्मिंग का संकट दूर करने में साहित्यकारों की कलम महनीय योगदान देगी। समकालीन हिंदी साहित्यकारों के साहित्य में पर्यावरण चेतना की अभिव्यक्ति अत्यंत मार्मिक और संवेदना के स्तर पर हुई है। निशांत जैन इक्कीसवीं सदीं के एक उभरते हुए कवि है। उनके काव्य में पर्यावरण के प्रति चिंता और संवेदना का स्वर मुखरित हुआ है।

बीजशब्द: पर्यावरण, मृदा अपरदन, बाढ़, आँधी भूस्खलन, क्लोरोफ्लोरो कार्बन, ग्लोबल वार्मिंग

उद्देश्य:

१. पर्यावरण की संकल्पना को समझना।
२. पर्यावरण के महत्त्व को समझाना।
३. निशांत जैन की कविताओं में पर्यावरण चेतना की अभिव्यक्तिका विश्लेषण करना।
४. पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रेरित करना।
५. प्राकृतिक और मानवी आपदाओं से परिचित कराना।

मूलआलेख

निशांत जैन की कविताओं में पर्यावरण चेतना की अभिव्यक्ति का विश्लेषण करने के पूर्व पर्यावरण संकल्पना को समझना आवश्यक है। "पर्यावरण शब्द का निर्माण दो शब्दों से मिलकर हुआ है। "परि" जो हमारे चारों ओर है "आवरण" जो हमें चारों ओर से घेरे हुए है। अर्थात पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ होता है चारों ओर से घिरे हुए है"।[1] विश्व शब्दकोश के अनुसार पर्यावरण की परिभाषा इस प्रकार है– "पर्यावरण उन सभी दशाओं, प्रणालियों तथा प्रभावों का योग है, जो जीवों और उनकी प्रजातियों के विकास, जीवन एवं मृत्यु को प्रभावित करता है"।[2] हमारे चारों ओर व्याप्त वातावरण जो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से हमें प्रभावित करता है पर्यावरण कहलाता है। प्रकृति हम पर कोई

ISBN-978-93-49938-50-2

कहर नहीं बरसा रही है। वह तो हमेशा हमें प्रेम देती है। प्रकृति हमें नदियों का साफ जल देती है लेकिन उस जल को प्रदूषित मानव ने किया है। प्रकृति हमें वृक्षों के माध्यम से मधुर फल, सुवासिक फूल, औषधीय जड़ी-बूटियाँ देती है। वह सभी सजीवों की क्षुधा के लिए खाद्यान्नों का निर्माण कराती है। लेकिन विकास के नाम पर अत्यंत निर्ममता से वृक्षों को तोड़ दिया है। पहाड़ों और जंगलों का विनाश कर मनुष्य ने बड़े-बड़े प्रकल्प वहाँ पर बनाए। पेड़ों के विनाश से वर्तमान समय में तापमान में दिनोंदिन वृद्धि हो रही है। असमय वर्षा, असमय तूफान, समुद्री तूफान, त्सुनामी, बाढ़, भूकंप और ज्वालामुखी जैसे प्राकृतिक आपदाएँ उग्र रूप धारण कर रही है। हाल में हैदराबाद का जंगल कटाई और प्राणियों का निवास छीन जाना, इधर-उधर घूमना, रास्ते पर आना यह एक मनुष्य की अत्यंत निर्ममता की कहानी है।

साहित्य में पर्यावरण तथा प्रकृति का वर्णन हमेशा से कोमल समूह तथा सुकुमार रूप में ही हुआ है। आदिकालीन हिंदी साहित्य में प्रकृति का वर्णन बारह मासा में अद्वितीय रूप में हुआ है। भक्ति काल, रीतिकाल तथा आधुनिक काल की सभी काव्यधाराओं में प्रकृति का वर्णन बहुत सुंदर तथा मोहक है। इक्कीसवीं सदीं का हिंदी साहित्य यथार्थ को अभिव्यक्त करता है। इक्कीसवीं सदीं में अनेक नए विमर्शों पर लेखन कार्य हो रहा है। जिसमें पर्यावरण विमर्श यह एक अत्यंत महत्वपूर्ण विमर्श सामने आ रहा है। पर्यावरण चेतना वर्तमान युग की माँग है। मनुष्य पर्यावरण के साथ खिलवाड़ कर रहा है। कहा जाता है कि, "जैसा बोओगे वैसा ही पाओगे।" मनुष्य पर्यावरण का विनाश कर रहा है और उसका नतीजा भी देख रहा है। आधुनिक कवि सुमित्रानंदन पंत, नागार्जुन, केदारनाथ अग्रवाल, अज्ञेय, महादेवी वर्मा, जयशंकर प्रसाद, मैशिलीशरण गुप्त, दिनकर, हरिवंशराय बच्चन, अष्टभुजा शुक्ल, गोरख पांडेय, निराला, निर्मला पुत्तुल, अनामिका, मंगलेश डबराल, अरुण कमल, निशांत जैन, आदि कवियों के काव्य में प्रकृति और आधुनिकता के संघर्ष का चित्रण मिलता है। इन कवियों ने नदी, पेड़, फूल, पानी, मिट्टी, आसमान, पशु-पक्षी आदि प्राकृतिक तत्वों को मानवीय भावनाओं से जोड़ा है। पर्यावरण शोषण पर व्यंग्यात्मक टीका टिप्पणी भी की है। उनके काव्य में पर्यावरण के प्रति प्रेम

और चिंता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। पर्यावरण की रक्षा में ही मानव का हित और रक्षा समाहित है जिसे मनुष्य जानकर भी अनजान और देखकर भी अनदेखा कर रहा है। हिंदी कविताओं में पर्यावरण चेतना का स्वर समकालीन हिंदी कविताओं में पहले से अधिक मुखर और स्पष्ट हो रहा है। बढ़ते नगरीकरण की अराजकता से समकालीन पर्यावरणवादी कवियों ने कविता में केवल प्रकृति को सुंदरता और सुकुमारता तक सीमित नहीं रखा बल्कि पर्यावरण के प्रति अपनी भूमिका तथा जिम्मेदारी भी निभाई है। ऐसे पर्यावरण प्रेमी कवियों में समकालीन युवा कवि निशांत जैन का नाम सराहनीय है। उनकी कविताओं में पर्यावरण के प्रति निष्ठा प्रेम तथा मानवता की झलक पाई जाती है।निशांत जैन मूलतः मेरठ (उत्तर प्रदेश) के रहने वाले है। उनका जन्म साधारण परिवार में ३० अक्तूबर १९८६ को हुआ। उन्होंने दूसरे प्रयास में ही संघ लोक सेवा आयोग (यूपीएससी) की ओर से आयोजित परीक्षा २०१४ में टॉप किया था। उनकी हिंदी माध्यम से परीक्षार्थियों में प्रथम रैंक व संपूर्ण भारत में उनकी रैंक १३ वीं थी। वे हिंदी भाषा प्रेमी और पर्यावरण प्रेमी कवि है। वे आय.ए.एस पद पर विराजमान है। उन्होंने एम फ़िल तथा पीएच.डी आदि उपाधियाँ प्राप्त की है। पर्यावरण चेतना को व्यक्त करने वाली उनकी कविता निम्नांकित है

१. गौरैया का घोंसला (पर्यावरण दोहे)
२. पर्यावरण चेतना से अब जागे हिंदुस्तान
३. ग्लोबल वार्मिंग

बचपन में गौरैया हमारे लिए बहुत ही आत्मीय विषय रहा है। गौरैया की चहचहाहट हर दिल को सुकून देती थी। गाँव में हममें से अनेकों की नींद गौरैया के चहकने से ही खुली है । गौरैया पेड़-पौधों पर तथा हमारे घरों में भी घोंसला बनाती थी । निशांत जैन गौरैया का घोंसला कविता में लिखते हैं -

“गौरैया का घोंसला
कहीं नहीं दिखता अब
नाही दिखती है वह

ISBN-978-93-49938-50-2

नन्ही सी गौरैया,
जो फुदकती थी आँगन में"।[3]

गौरैया की चहचहाहट हमारे दिनकी शुरुआत थी। अब सुबह मोबाइल का अलार्म से हमारी नींद खुलती है। सीमेंट के जंगलों में ना कोयल ना गौरैया ना पीपल की छाँव है। अब गौरैया का घोंसला नहीं बचा है। कवि निशांत जैन चिड़िया के गुमजाने का दर्द प्रस्तुत पंक्तियों में अभिव्यक्त करते है।

"वो घोंसला,
जो बसता था बरगद की डाल पर,
अब कहीं नहीं है।
शहर ने निगल लिया उसका ठिकाना"।[4]

निशांत जैन की कविता गौरैया का घोंसला पर्यावरण चेतना की एक मार्मिक और प्रभावशाली अभिव्यक्ति है। यह कविता मानवीय प्रगति के दौड़ में नष्ट होती प्रकृति की करुण पुकार को स्वर देती है। इसमें गौरैया के माध्यम से खोते जा रहे पर्यावरण और जीवनशैली की पीड़ा की अभिव्यक्ति की गई है।

"ज्ञान और विज्ञान का क्या है यही प्रभाव,
सुखे बाग तालाब सब सुना हो गया गाँव,
जब-जब का पेड़ धारा भूस्खलन विस्फोट,
बड़े आंधी आपदा भूकंप की चोट।"[5]

मानव निरंतर और अविरत औद्योगिककरण के कारण पर्यावरण को संकट में डाल रहा है। जिसके परिणाम स्वरुप पृथ्वी घबरा रही है। वह मानव निर्मित अत्याचार से शोषित है। यह काव्य पंक्तियाँ कुदरत के विनाश और मानव की लालची प्रवृत्ति के कारण पर्यावरण में आए परिवर्तनों को दर्शाती है। यह कविता मानव के प्रकृति पर होने वाले अत्याचार के भविष्य में प्राकृतिक दृश्य के विनाश की ओर संकेत करती है। जैसे कोयल की कूक, बरगद की छाँव, गौरैया का घोंसला भविष्य में नहीं रहेगा। इस प्रकार प्रश्न चिन्ह है। बड़े मोबाइल टावर उससे निकलने वाली तरंगें गौरैया जैसे पंछियों की जान ले रही

है। निशांत जैन एक युवा और बहुत ही सजग साहित्यकार है। उनकी कविताएँ केवल समस्याओं को प्रस्तुत नहीं करती है बल्कि समाधान भी प्रस्तुत करती है। ग्लोबल वार्मिंग कविता में कवि ने पर्यावरण पर चिंता व्यक्त करते हुए लिखा है-

"पेड़ था
उसके नीचे
गौरैया ने घोंसला बनाया
एक दिन पेड़ कटा
पेड़ की जगह
हीरो होंडा आ गई"।[6]

ग्लोबल वार्मिंग यह कविता आकार से लघु है। लेकिन इस कविता में गागर में सागर भरने की क्षमता है। हमारे चारों ओर व्याप्त वातावरण जो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से हमें प्रभावित करता है, पर्यावरण कहलाता है। इस कविता में कवि ने लिखा है कि, हीरो होंडा की जगह सूअर का बच्चा लेटा है, उसकी जगह एक महान आदमी खड़ा हो गया है। यह एक प्रतीकात्मक कविता है। जो बहुत ही गहरा सन्देश देती है। इस कविता का पेड़ प्रकृति का प्रतिनिधित्व करता है, जो जीवन देने का काम करता है। जीवन की सहजता और जैव विविधता का प्रतीक गौरैया का घोंसला है। इस कविता में वर्णित हीरो होंडा गाड़ी प्रदुषण, आधुनिकता तथा उपभोक्तावादी संस्कृति की प्रतीक रूप में चित्रित है। आधुनिक काल में जो नैतिक पतन चरम सीमा पर पहुँच गया है और स्वार्थपरता बढ़ गई है। इसी वृत्ति का प्रतीक सूअर का बच्चा है। यंत्रों के विकास से मनुष्य में अहंभाव बढ़ गया है। इस कविता में वर्णित महान आदमी वह मनुष्य है, जो खुद को प्रकृति से ऊपर मानता है। किन्तु असल में वह महान आदमी ही विनाशक है।

दिन-ब-दिन ओझोन वायु के परत में क्षरण हो रहा है। वायुमंडल के औसत तापमान में वृद्धि हो रही है, जिसने वैश्विक तापन की भीषण समस्या को जन्म दिया है। बढ़ती जनसंख्या प्राकृतिक संसाधनों को अत्यंत प्रभावित कर रही है। मनुष्य के आवास के लिए पंछियों का निवास जंगलों की कटाई के माध्यम से छीना जा रहा है। पर्यावरण

ISBN-978-93-49938-50-2

चेतना से अब जाकर हिंदुस्तान इस कविता में कवि ने पर्यावरण बचाने का आवाहन किया है। वह कहते हैं, जल-जंगल और जमीन आदि पर्यावरण या घटकों की हमें रक्षा करनी चाहिए। निम्नांकित पंक्तियाँ द्दष्टव्य है-

"जल-जंगल-जमीन की रक्षा को अपना अभियान
पर्यावरण चेतना से अब जागे हिंदुस्तान।[7]

इस कविता में कवि ने मिट्टी, पानी, हवा को कुदरत का वरदान कहा है। पशु-पक्षी और पेड़ों को मित्र कहकर इनको ना छेड़ने को कहा है। प्रकृति में दानता का भाव होता है। प्रकृति से हम जितना माँगते हैं, उससे अधिक वह हमें देती है। लेकिन प्रकृति रूपी माँ के साथ हमें खिलवाड़ नहीं करना चाहिए। निम्नांकित पंक्तियों में इसी भाव की अभिव्यक्ति हुई है जो इस प्रकार हैं-

"प्रकृति माँ देती, जितना माँगों, उसे भी ज्यादा।
संसाधन का अनुचित दोहन तेरा गलत इरादा
बढ़ता लालच कर देगा धरती को सुनसान"।[8]

प्रकृति के गलत दोहन से पर्यावरण के सभी घटक प्रदूषित हो गए हैं। वर्तमान युग में पर्यावरणीय असंतुलन से निर्माण आपदाओं को निम्नांकित पंक्तियों में अभिव्यक्त करते हैं।

"गलते पर्वत, धरती और धगधगती ज्वाला।
हुआ क्षरण ओजोन परत का कैसा गड़बड़ झाला।
असंतुलित विकास देख, है कुदरत भी हैरान"।[9]

इस कविता में कवि ने वायु, जल, मृदा, ध्वनि प्रदूषणों का जिक्र करते हुए उनके परिणामों को भी दर्शाया है। प्राकृतिक संसाधनों के अनुचित दोहन की समस्याओं को रेखांकित करते हुए समाधान के रूप में सामूहिक चेतना और प्रयास की आवश्यकता पर बल दे दिया है। उन्होंने अपनी कविताओं में पर्यावरणीय मुद्दों को संवेदनशीलता और गहराई से प्रस्तुत किया है। उनकी नदी, पेड़, गौरैया का घोंसला, पर्यावरण चेतना से अब जगह हिंदुस्तान, ग्लोबल वार्मिंग जैसी अनेक कविताएँ पर्यावरण के संसाधनों के गलत

दोहन की पीड़ा और संवेदना को अभिव्यक्त करती है। नदी, पेड़ आदि विषयों में अत्यंत गहरी आत्मीयता तथा संवेदना जुड़ी है।प्रत्येक सजीव का पर्यावरण के साथ गहरा और अटूट रिश्ता है।"भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन के जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल की चौथी आकलन रिपोर्ट 2007 के अनुसार अनुमान है कि,इक्कीसवीं सदी के अंत तक वर्षा 15 से 31% तक बढ़ेगी और औसत वार्षिक तापमान 3 डिग्री सेल्सियस से 6 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ेगा"। निशांत जैन की कविताएँ पर्यावरण रक्षा की आवश्यकता को दर्शाती है। मनुष्य में स्वार्थी वृति इतनी पनप रही है कि, स्वयं के विकास के लिए पशु-पंछियों का निवास छिनकर हमारी सांस्कृतिक और भावनात्मक जड़ों को भी खोखला बना दिया है।

निष्कर्ष:

निशांत जैन की कविताओं में पर्यावरण चेतना की सशक्त अभिव्यक्ति हुई है। सरल सीधे भाषा में पर्यावरण रक्षा और चेतना का गहन संदेश मिलता है। उनकी कविताएँ पाठकों को न केवल सोचने पर मजबूर करती है बल्कि उन्हें पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रेरित भी करती हैं। पाठकों में पर्यावरण चेतना के बीज अंकुरित और पल्लवित कर वृक्ष जैसा विस्तार लेने के लिए प्रेरित करती है। प्रकृति के संसाधनों का गलत दोहन न करने का भी संदेश देती है। अंत में इतना कहा जा सकता है कि, यदि पर्यावरण का अस्तित्व रहेगा तब मनुष्य का भी अस्तित्व बचा रहेगा। मनुष्य को अपना और सजीव सृष्टि का अस्तित्व बनाए रखने के लिए सुखी जीवनयापन के लिए पर्यावरण की रक्षा करना अनिवार्य शर्त है। जिसे मनुष्य को मानना ही पड़ेगा।

संदर्भ:-

1. निशांत जैन, गौरैया का घोंसला https://nishantjainias.blogspot.com
2. निशांत जैन, गौरैया का घोंसला https://nishantjainias.blogspot.com
3. निशांत जैन, गौरैया का घोंसला https://nishantjainias.blogspot.com
4. निशांत जैन, ग्लोबलवार्मिंग https://nishantjainias.blogspot.com

ISBN-978-93-49938-50-2

5. निशांत जैन, पर्यावरण चेतना से अब जागे हिंदुस्तान, https://nishantjainias.blogspot.com
6. निशांत जैन, पर्यावरण चेतना से अब जागे हिंदुस्तान, https://nishantjainias.blogspot.com
7. निशांत जैन, पर्यावरण चेतना से अब जागे हिंदुस्तान, https://nishantjainias.blogspot.com
8. https://hi.wikipedia.org
9. https://aresearchcontent.blogspot.com
10. https://isro.gov.in:IPCCreportonclimatechange2007

जयशंकर प्रसाद के 'कामायनी' में पर्यावरण चेतना

डॉ. देशपांडे आर.के.
हिंदी विभाग अध्यक्षा
जामखेड महाविद्यालय जामखेड, तह – जामखेड, जि.- अहिल्यानगर
Email ID- dratnamala11@gmail.com

प्रास्ताविक –

पर्यावरण शब्द की उत्पत्ति परि + आवरण से हुई है। जिसका अर्थ है, 'परि' चारो तरफ, 'आवरण'- घेरा हुआ अर्थात प्रकृति में जो भी हमारे चारों तरफ परिलक्षित होता है वह पर्यावरण है। वायु, जल, आकाश, मृदा, पेड़-पौधे, प्राणी, पर्वत, नदीयाँ आदि पर्यावरण के अंग है और इन्हीं से पर्यावरण बनता है। मानव के स्थूल भौतिक शरीर का निर्माण भी प्रकृति के पंचतत्व से हुआ है। अतः मानव में प्रकृति के प्रति प्रेम नैसर्गिक है। मानव का जन्म से लेकर मृत्यू तक प्रकृति से गहरा सम्बन्ध है। लेकिन मानव आज भौतिक सुविधाओं के पीछे दौड रहा है। प्रगतिशीलता के नाम पर प्रकृति का विनाश कर रहा है। जिससे पर्यावरण संतुलन बिघडता जा रहा है। परंतु मानव यह भूल रहा है कि प्रकृति के विनाश से हमारा स्थायी विकास होना-तो दूर, हम स्थायी रूप से मानसिक संतुलन खोते जा रहे है। प्रगति के नाम पर प्रकृति पर नियमन करने का हठ छोडकर प्रकृति का ही हम अभिन्न अंग है यह समझने का प्रयास करे तो मानव जाति के लिए अच्छा रहेगा।

पर्यावरण विशेषज्ञ प्रकृति को बचाने की, संतुलन रखने की भरकस कोशिश कर रहे है। यही कार्य प्राचीन काल से साहित्य के माध्यम से हो रहा है। हमारे ऋषि-मुनि, उनके आश्रम, उनका प्रकृति से सम्बन्ध, वैदिक ऋचाओं का निर्माण प्रकृति की गोद में हुआ। वेदों, उपनिषदों, पुराणो, स्मृतियों, सूत्र- ग्रंथों में भारतीय संस्कृति का भव्य रुप प्रतिनिहित है। भारतीय संस्कृति में वैदिक परम्पराओं से लेकर वर्तमान काल में भी वृक्षों की पूजा का विशिष्ट महत्व पर्यावरण की चेतना देती है।

ISBN-978-93-49938-50-2

हिंदी साहित्य में प्रत्येक काल में किसी न किसी रूप में प्रकृति एवं पर्यावरण का चित्रण काफी मात्रा में हुआ है। आधुनिक काल में छायावादी काव्यधारा में पर्यावरण के प्रति प्रौढता दृष्टिगोचर होती है। इस काल के कवियों में गुप्तजी, सुमित्रानंदन पंत, मुकुटधर पाण्डे, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', महादेवी वर्मा, जयशंकर प्रसाद आदि कवियों ने अपने काव्य में प्रकृति एवं पर्यावरण का चित्रण सुंदरता से किया है। केवल प्राकृतिक सौदर्य वर्णन नहीं तो उसके जरिए पर्यावरण चेतना को भी बनाये रखा है। इस युग के प्रमुख स्तंभ प्रसादजी के काव्य में पर्यावरण का गहन चिंतन परिलक्षित होता है। उन्होंने अपने प्रसिद्ध महाकाव्य 'कामायनी' में प्रकृति के विविध रूपों का चित्रण किया है। कभी प्रकृति का मानवीकरण, तो कभी प्रकृति के साथ तादात्म्य, कभी कोमल भावनाओं का चित्रण तो कभी प्रकृति का रौद्र रूप चित्रित किया है।

प्रसादजी ने अपने महाकाव्य 'कामायनी' के 'इडा' सर्ग के इन पंक्तियों में मानव जीवन की निराशा एवं पर्यावरण के महत्व को दर्शाया है।

" देखे मैंने वे-शैल श्रृंग

जो अचल हिमानी से रंजितः उन्मुक्त उपक्षो भरे तुंग

अपने जड़-गौरव के प्रतीक वसुधा का कर अभिमान भंग"

मनुष्य के जीवन की निराशा को प्रकृति आशा में परिवर्तित करती है। वही प्रकृति उसके दुरुपयोग या विनाश पर भयावह और विनाशकारी भी हो सकती है। कवि यहाँ यह संदेश देना चाहते है कि, यदि पर्यावरण का समुचित संरक्षण न किया जाए तो हमे प्रकाश अर्थात जीवन देने वाली प्रकृति हमे हताश करती है या क्षति पहुँचा सकती है। अतः हमे प्रकृति का महत्व समझकर - पर्यावरण का संरक्षण करना चाहिए। जिससे जीवन प्रकाशमान हो सकता है।

कामायनी के 'चिंता' सर्ग में कवि ने प्रलयकारी जलप्लावन का वर्णन किया है, जो मनुष्य की भोगवादी प्रकृति का परिणाम है। प्रलय में पंचमहाभूतों का मानो तांडव चाल रहा है। यह काव्य पंक्तियाँ देखिए -

"हाहाकार हुआ क्रंदनमय कठिन कुलिश होते थे चूर

हुए दिगंत बधिर, भीषण रव बार-बार होता था क्रूर ।

दिग्दाहों से धूम उठे, या जलधर उठे क्षितिज तटके।

सघन धनमें भीम प्रकंपन, झंझाके चलते झटके।

पंचभूत का भैरव मिश्रण, शंपाओं के शुकल निपात

उल्का लेकर अमरशाक्तीयाँ खोज रही जो खोया प्रात।"

जहाँ प्रकृति और मानव एक दूसरे के परस्पर पूरक हो जाते है वहाँ प्रकृति अपना कोमल नितांत सुंदर सुखमय रूप दिखाती है। 'आनंद' सर्ग में कवि के कल्पना की परख तथा कुशलता दिखायी देती है। इड़ा के वचन- "सुनती हूँ एक मनस्वी था वहाँ एक दिन आया। वह जगती के ज्वाला से अति विकल रहा झुलसाया।

उसकी वह जलन भयानक फैली गिरि- अंचल में फिर,

दावाग्नि प्रखर लपटों ने कर दिया सधन बन अस्थिर।

थी अर्धागिनी उसी की जो उसे खोजती आयी,

यह दशा देख, करुणा की वर्षा दृग में भर लायी।

वरदान बने फिर उसके आँसू, करते जय मंगल,

सब ताप शांत होकर, वन हो गया हरित सुख शीतल ।"

सारांश -

'कामायनी में पर्यावरण चेतना का संदेश प्रकृति चित्रण, मनुष्य और प्रकृति का संम्बंध, प्रकृति का मानवीकरण आदि के माध्यम से किया है। कामायनी में प्रकृति को केवल एक दृश्य के रूप में नहीं, बल्की एक जीवंत इकाई के रूप में चित्रित किया है। मनुष्य और प्रकृति के बीच गहरे संबंध पर जोर दिया है, प्रसाद जी ने अपने काव्य द्वारा प्रकृति की महत्ता को चित्रित करते हुए पर्यावरण के-गूढ रहस्यों एवं तथ्यों को उद्घाटित कर पर्यावरण संरक्षण के प्रति जन-जागृति लाने की पूर्ण चेष्टा की है।

संदर्भ :-

1) प्रसाद के साहित्य में पर्यावरण चेतना - नवल किशोर-लोहनी, सुधीर कुमार शर्मा

ISBN-978-93-49938-50-2

2) आधुनिक जीवन और पर्यावरण -दामोदर शर्मा, हरिश्चंद्र व्यास

3) कामायनी - जयशंकर प्रसाद

4) Shodhshauryam, https://shisrrj.com

निराला के काव्य में प्रकृति चित्रण

डॉ. सारिका आप्पा भगत

हिंदी विभाग

श्री पद्ममणि जैन कला व वाणिज्य महाविद्यालय पाबळ,

तह– शिरूर, जि– पुणे

ई मेल - misssarikatalekar@gmail.com

शोधसार –

साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। साहित्य में हम समाज को अनुभव करते हैं। हर युग के साहित्य से लोगों का रहनसहन, भाषा, बोली, खानपान, आचार विचार, संस्कृति, पर्यावरण और प्रकृति का चित्र स्पष्ट होता है। आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक साहित्य में पर्यावरण और प्रकृति का चित्र दिखाई देता है द्विवेदी युग के कवि अयोध्यासिंह उपाध्याय अपने महाकाव्य 'प्रियप्रवास' में प्रकृति के मनोहारी रूप का चित्रण करते हैं।

"दिवस का अवसान समीप था
गगन था कुछ लोहित हो चला
तरुण शिखा पर भी अब राजती
कमलिनी कुल वल्लभ की प्रभा"

हिन्दी काव्य में प्रकृति के मोहक, मधुर रूप का चित्रण है तो कहीं कहीं प्रकृति के भयंकर विनाशकारी रूप का भी चित्रण किया है हरिवंशराय बच्चन की कविता 'नीड़ का निर्माण' में प्रकृति के भयंकर रूप का चित्रण हुआ है ।

"नीड़ का निर्माण फिर नेह का आवाहन फिर फिर

ISBN-978-93-49938-50-2

वह उठी आँधी की नभ में छा गया सहसा अंधेरा
धुली धूसर बादलों ने भूमि को इस भाँति घेरा
रात सा दिन हो गया फिर रात आयी और काली
लग रहा था अब न होगा इस निशा का फ़िर सबेरा
रात के उत्पात भय से भीत जन जन भीत कण कण
किंतु प्राची से उषा की मोहिनी मुस्कान फिर फिर !"

सुर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' छायावादी युग के प्रमुख चार स्तंभो में से एक प्रमुख कवि है। निराला के काव्य में छायावादी युग में प्रकृति चित्रण है तो प्रगतिवादी युग में प्रकृति के साथ मार्क्स वाद से प्रभावित काव्य है। छायावादी काव्य में जिस तरह से प्रेम, सौंदर्य, निराशावाद, पलायनवाद, कल्पनाशीलता, भावप्रवणता, कोमलकांत पदावली आदि रोमेण्टिक प्रवृत्तियाँ व्यापक रूप से विद्यमान है। उसी प्रकार प्रकृति के मनोहारी चित्र खींचने में छायावादी कवियों का मन बहुत रमा है। आलंबन रूप में प्रभावी प्रकृति चित्रण छायावादी कविता की एक सर्वोपरि विशेषता है। द्विवेदी युग और छायावादी युग को छोडकर प्रकृति के सहज स्वाभाविक और स्वतंत्र चित्र कहीं नहीं मिलते आधुनिक काल से पूर्व प्रकृति के चित्र या तो उद्दीपन रूप में है या रहस्यात्मक, उपदेशात्मक और अलंकृत रूप में। प्रकृति के आलंबनपरक स्वरूप का चित्रण छायावादी काव्य की नूतन और मौलिक विशेषता है। जयशंकर प्रसाद और पंत की कवितओं में प्रकृति के इस स्वरूप की व्यापक अभिव्यक्ति हुई है। निराला और महादेवी वर्मा की कविताओं में भी प्रकृति चित्रण की भरमार है। पंत तो प्रकृति के सुकुमार कवि के रूप में ख्यात है। निराला के काव्य में छायावादी चेतना, प्रकृति प्रेम और व्यक्तिगत भावनाओं की अभिव्यक्ति प्रमुखता से मिलती है।

बीज शब्द – छायावाद, प्रगतिवाद, मुक्त छंद, शोषक, शोषित, मानवीकरण, प्रकृति

संवेदना

प्रस्तावना

छायावादी कवियों में विलक्षण प्रतिभा के धनी सुर्यकांत त्रिपाठी निराला का विशेष स्थान है। निराला का जन्म बंगाल के मेदिनीपूर जिले की महिषादल रियासत में हुआ। उनका संस्कृत, बंगला, अंग्रेजी और हिंदी भाषा पर पूरा अधिकार था। उन्हें हिंदी साहित्य में मुक्त छंद के प्रवर्तक कवि कहा जाता है। निराला का जीवन बड़ी कठिन परिस्थितियों से गुजरा, उन्हें कभी आर्थिक संकटों ने घेरा, कभी उन पर सामाजिक रूढियों के आघात हुए, कभी अपने प्रियजनों को खोना पड़ा। इन सबके बावजूद वे दुखी निराश और हताश नहीं हुए, उन्होंने अपने निजी जीवन को ही कविताओं के विषय बनाए। 'सरोज स्मृति,'स्नेह निर्झर बह गया है' आदि कविताओं में उनका जीवन व्यक्त हुआ है। निराला छायावाद के प्रमुख स्तंभ के रूप में है। परंतु उनकी अभूतपूर्व रचानाओं ने उन्हें प्रगतिवाद की श्रेणी में लाकर खड़ा कर दिया है। निराला की सबसे बड़ी विशेषता यही भी है कि वे किसी बंधे हुए रास्ते पर नहीं चलते थे। उनके काव्य लेखन में इसकी झलक दिखाई देती हैं। उन्होंने मुक्त छंद में काव्य लेखन शुरू किया, उन्हें मुक्त छंद के प्रवर्तक कवि भी कहा जाता हैं। निराला प्रगतिवादी चेतना के कवि है। प्रगतिवादी कवि समाज को शोषित और शोषक के रूप में देखता है। प्रगतिवादी शोषक वर्ग के खिलाफ शोषित वर्ग में चेतना लाने का तथा शोषित वर्ग को संघटित कर शोषण से मुक्त समाज की स्थापना की कोशिश का समर्थन करता है।

शोध विस्तार -

प्रकृति मनुष्य को जन्म से ही प्रेरक रही है। छायावादी कावियोंने प्रकृति को चेतन सत्ता माना है और उसका मानवीकरण करके उसी के माध्यम से अपने भावों की अभिव्यक्ति की है। प्रकृति को इन्होंने कई रूपों में अपनाया है। निराला की कविताओं में

ISBN-978-93-49938-50-2

प्रकृति का चित्रण केवल बाह्य सौंदर्य तक सीमित नहीं है, बल्कि इसे मानवीय भावनाओं, संघर्ष , निजी जीवन और आध्यात्मिकता के प्रतिक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। निराला की 'अभी न होगा मेरा अंत' कविता युवा वर्ग को व्यापक जीवन दृष्टि देणे कार्य करती है।

"अभी न होगा मेरा अंत
अभी अभी ही तो आया है
मेरे जीवन में मृदुल वसंत
अभी न होगा मेरा अंत "

कवि निराला 'अभी न होगा मेरा अंत' कविता में युवावस्था रुपी वसंत पर प्रकाश डालते हैं। वसंत ऋतु में जिस प्रकार पेड़ पर हरे हरे पत्ते , कलियाँ दिखाई देती हैं, उसी प्रकार युवावस्था शरीर को उत्त्साह से भर देती है।

प्रकृति संवेदना निराला की काव्य संवेदना का आवश्यक अंग है । प्रकृति निराला के लिये जीवित वास्तविकता है। जुही की कली कविता प्रकृति के श्रृंगारी रूप की व्यंजना करती है।

"विजन वन वल्लरी पर
सोती थी सुहाग भरी
स्नेह स्वप्न मग्न अमल
कोमल तनु तरुणी – जुही की कली"

कवि ने 'जूही की कली' का मानवीकरण किया है। कोमल, तनु, अर्धस्फूट कलि, बिजन वन वल्लरी पर सोई हुई थी । कवि ने कलि और पवन को नायक नायिका के रूप में चित्रित किया है ।

'राम की शक्ती पूजा' कविता में कवि ने प्रकृति के यथार्थ चित्रण के साथ उसके

भयानक रूप का भी चित्रण किया है। राम रावण युद्ध के समय आमावस्या का अंधेरा वातावरण में छाया हुआ है। राम के हृदय में निराशा घर करती जा रही है। अतः निराशा का चित्रण करते हुए अंतः एवं बाह्य प्रकृति का सामंजस्य प्रस्तुत किया है ।

"है अमा निशा उगलता गगन घन अंधकार
खो रहा दिशा का ज्ञान, स्तब्ध है पवन चार ....
स्थिर राघवेंद्र को हिला रहा
फिर - फिर संशय
रह रह उठता जग जीवार में रावण जय भय।"

राम रावण युद्ध में शक्ति रावण की सहायता कर रही है। अतः राम रावण को परास्त नहीं कर पा रहे थे। परिणामतः वे अत्यंत निराश एवं दुखी थे। रह – रहकर उनके मन में रावण की विजय की आशंका जाग उठती थी। निराशा के इन क्षणों में राम के स्मृतिपटल पर कुमारी सीता की वह छवि कौंध गई जो उन्होंने पहले पहल जनावाटिका में देखी थी। सीता की स्मृति मात्र से उनकी निराशा दूर हो गयी। इसमें प्रकृति के मनोहारी रूप का चित्रण किया है।

"ऐसे क्षण में अंधकार घम में जैसे विद्युत
जागी पृथ्वी- तनया – कुमारिका – छवि अच्युत
देखते हुए निष्पलक, याद आया उपवन
विदेह का – प्रथम स्नेह का लातान्तराल मिलन
नयनों का नयनों से गोपन प्रिय संभाषण
पलकों का नव पलकों पर प्रथामोत्थान – पतन"

"स्नेह निर्झर बह गया है" कविता में निराला ने जीवन के अनुभवों को और भावनओं को व्यक्त किया है ।

ISBN-978-93-49938-50-2

"स्नेह निर्झर बह गया है।
रेत जो तन रह गया है।
आम की यह डाल जो सूखी दिखी
कह रही – अब यहां पिक या शिखी
नहीं आते, पंक्ति मैं वह हूं लिखी ।।"

'स्नेह निर्झर' का अर्थ प्रेम का झरना और "बह गया है" का अर्थ है कि वह अब नहीं रहा या समाप्त हो गया है। इस कविता में कवि अपने जीवन में प्रेम ख़ुशी और उत्त्साह के चाले जाने का वर्णन करते है।

निराला की प्रगतिशीलता जनसामान्य के जीवन में निहित है क्योंकि वे जन -जन के कवि है। अपने आप को वे प्रत्येक जन में देखते हैं उनके परिश्रम को शोषण को अपना समझते हैं और काव्य के माध्यम से वह व्यक्त होते है। 'तोड़ती पत्थर' कविता में उन्होंने श्रम करती हुई मजदूर स्त्री की दुर्दशा का चित्रण किया है।

"वह तोड़ती पत्थर
देखा मैंने इलाहाबाद के पथ पर
वह तोड़ती पत्थर
कोई न छायादार
पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार ,
श्याम तन, भर बँधा यौवन
नत नयन प्रिय, कर्म रत मन
गुरु हथौड़ा हाथ,
करती बार- बार प्रहार
सामने तरू मालिका अट्टालिका, प्राकार।

स्त्री के भावों को उसके अंदर की वेदना को समझने का प्रयास निराला ने अपने काव्य में किया। यह मजदूर स्त्री तपती दोपहरी में भारी हथौड़े से धूप में बैठी पत्थर तोड रही है, तो दुसरी ओर वे पूंजीपति हैं जिन्होंने छायादार पेडों को भी अपने भवन को चाहरदीवारी में कैद कर रखा है। जब छायावादी कविताओं में रोमांस और रहस्य अधिक लिखा जा रहा था तब निराला ने किसानों के शोषण पर कविताएँ लिखी। इसलिये उनकी कवितओं के विषय शीर्षक सामान्य जन -जन के निकट रहे जैसे –'विधवा', 'भिक्षुक', 'तोडती पत्थर' और 'कुकुरमुत्ता' आदि। निराला ने 'कुकुरमुत्ता' कविता में शोषित और शोषक वर्ग को बहुत ही गहराई से उकेरा है। जिसमें 'कुकुरमुत्ता' शोषित वर्ग का प्रतिक है तो गुलाब शोषक वर्ग का। कुकुरमुत्ता और गुलाब के माध्यम से निराला का प्रकृति चित्रण विशेष है।

"अबे सुन बे गुलाब
भूल मत जो पाई खुशबू, रंग – ओ – आब
खून चूसा खाद का अशिष्ट
डाल पर इतरा रहा है केपीटलिस्ट।
कितनों को तुने बनाया है गुलाम,
माली कर रकखा, सहाया जाडा- धाम

पूंजीपति वर्ग के प्रति घृणा इस कविता में साफ दिखाई देती है। कवि ने गुलाब के बहाने पूंजीपतियों के प्रति अपना आक्रोश व्यक्त किया।

निष्कर्ष

निष्कर्षत: कह सकते है कि हिंदी साहित्य में कविता में विषय वस्तु की दृष्टी से नये प्रयोग करने वाले कवि के रूप में निराला का नाम विशेष रूप से आता है। प्रगतिशील चेतना को व्यक्त करनेवाली उनकी 'तोडती पत्थर' कविता में पत्थर तोडनेवाली मजदूर

ISBN-978-93-49938-50-2

स्त्री का चित्र अंकित किया है। 'राम की शक्ति पूजा' कविता सांस्कृतिक धरातल पर लिखी गयी है, 'तो जूही की कली' कविता में प्रकृति का मानवीकरण है। 'कुकुरमुत्ता' में शोषक वर्ग के प्रति घृणा है, 'स्नेह निर्झर बह गया है' में निजी जीवन के अनुभवों को व्यक्त किया है तो 'अभी न होगा मेरा अंत' कविता युवावस्था रुपी वसंत को व्यक्त करती है। निराला का संपूर्ण काव्य विविध प्रयोगों से भरा है, भाषा, छंद विधान, विषय वस्तु, शैली सभी दृष्टीयों से नये नये प्रयोग निराला के काव्य में दिखाई देते हैं। निराला प्रकृति प्रेमी कवि है। उनके काव्य में प्रकृति प्रेम झलकता है।

संदर्भ ग्रंथ

1. काव्यायन – काव्य संग्रह, डॉ.सुभाष तळेकर, डॉ. सुरेश साळुंके
2. साहित्य सृजन –संपादक –हिंदी अध्ययन सा .फु .पुणे विश्वविद्यालय पुणे
3. हिंदी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ, डॉ. शिवकुमार शर्मा
4. https://echetana.com/wp-content/uploads/2020/04/7.-A-HJitendra-Kumar-Barbad.pdf

'आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी' के निबंधों में पर्यावरण चेतना

डॉ. एन. बी. एकिले

सहयोगी प्राध्यापक

प्रमुख, हिंदी विभाग

शिवराज महाविद्यालय साहित्य, वाणिज्य एवं

डी. एस.कदम विज्ञान महाविद्यालय, गडहिंग्लज, जि. कोल्हापूर

ईमेल: narsingekile85@gmail.com

शोध सारांश

भारतीय धर्म, संस्कृति और साहित्य में प्रकृति एवं पर्यावरण को पूजनीय स्वीकार किया है। भारतीय संस्कृति में तुलसी की पूजा और पीपल हमें कई रोगों से लड़ने की क्षमता प्रदान करते हैं। लेकिन आज मनुष्य प्रकृति तथा पर्यावरण के प्रति लालची हुआ है। इसी लालची मानसिकता के कारण वर्तमान समय में पर्यावरण प्रदूषण काफी मात्रा में बढ़ चुका है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के ललित निबंध भी इसी समस्या की ओर इंगित करते हैं। उनके ललित निबंधों में मानव जीवन से संबंधित सभी पहलुओं पर विस्तार से चर्चा की गई है। उनके निबंधों का प्रमुख उद्देश्य संपूर्ण मानव कल्याण की भावना है। प्रकृति के प्रति उनका बड़ा ही गहरा अनुराग रहा है। उनके निबंधों में संपूर्ण प्राकृतिक परिवेश भावों तथा भावनाओं से ओत-प्रोत है। उनका मानना है कि प्रकृति मानव को सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक दृष्टि से समृद्धि प्रदान करती है।

बीज शब्द : पर्यावरण, संस्कृति, संरक्षण, नगरीकरण, प्रदूषण, औद्योगीकरण, जल, आकाश, भूमि आदि।

ISBN-978-93-49938-50-2

शोध प्रविधि

शोध की समीक्षात्मक पद्धति के साथ-साथ आलोचनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धतियों को अपनाया गया है।

प्रस्तावना

वर्तमान युग में समग्र विश्व के लिए पर्यावरण असंतुलन चिंता का विषय बना हुआ है। पर्यावरण वैश्विक स्तर पर सबसे बड़ी समस्या के रूप में उभरा है। आज संपूर्ण विश्व में पर्यावरण चेतना जागृत करना तथा पर्यावरण का संरक्षण करना नितांत आवश्यक और अनिवार्य हुआ है। विश्व के लगभग सभी राष्ट्रों के पर्यावरणविद् एवं वैज्ञानिक प्रस्तुत समस्या के निवारण हेतु बड़ी मात्रा में प्रयासरत हैं। शिक्षा के क्षेत्र में प्राथमिक से लेकर उच्च शिक्षा तक के सभी विषयों में पर्यावरणीय शिक्षा को अनिवार्य किया है। विश्व में आज अनेक स्वयंसेवी तथा सामाजिक संस्थाएं भी इस महानतम कार्य में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रही है। इस परिप्रेक्ष्य में साहित्य और संस्कृति से भी पर्यावरण पोषण और संरक्षण की दिशा में अतुलनीय सहयोग प्राप्त हो रहा है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के ललित निबंधों में यह पर्यावरण चेतना अत्यंत स्वाभाविक रूप में अभिव्यक्त हुई है। उनके ललित निबंधों के सूक्ष्म अध्ययन से इस बात का पता चलता है कि उनके समग्र निबंधों में जैविक घटकों के अंतर्गत मानव, जीव-जंतु, पेड़-पौधे, जीवाणु तथा अजैविक घटकों के अंतर्गत जल, हवा, वायु, मिट्टी, ध्वनि, ग्लोबल वार्मिंग, समुद्री प्रदूषण समस्या एवं संरक्षण से संबंधित उनके अमूल्य विचारों को इस शोध-आलेख में प्रस्तुत करने का प्रयास किया है, जो निम्नवत है-

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध बहुपक्षीय है। प्रकृति, संस्कृति, समाज, राष्ट्र, मानव, जीव-जगत आदि का चिंतन उनके निबंधों में पर्याप्त मात्रा में हुआ है। वर्तमान परिस्थिति में संपूर्ण विश्व जिस समस्या से सबसे अधिक चिंतित हैं, वह है पर्यावरण

प्रदूषण। नगरीकरण एवं औद्योगीकरण के विकास तथा भौतिकवादी सभ्यता के उत्थान ने सबसे अधिक क्षति हमारे पर्यावरण को पहुंचाई है। जल, थल, वायु, आकाश आदि सभी प्राकृतिक कारक प्रदूषण की चपेट में हैं। 'बरसो भी' नामक निबंध द्विवेदी का चर्चित ललित निबंध है, जिसमें लेखक ने पर्यावरण के बिगड़ते हुए संतुलन का विवेचन प्रस्तुत किया है। आज पर्यावरण में इतना अधिक प्रदूषण बढ़ चुका है कि प्राकृतिक असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हुई है। अधिक प्रदूषण के कारण ही कहीं अधिक बारिश गिरती है तो कहीं हवा का दबाव न बन पाने के कारण बारिश नहीं होती है। बारिश एवं जल के अभाव में अकाल और भुखमरी की समस्या उत्पन्न होती है, तो कहीं अधिक वर्षा के कारण बाढ़ की समस्या से जीवन अस्त-व्यस्त होता है। द्विवेदी के इस निबंध में प्राकृतिक असंतुलन के प्रति गहरी निराशा दिखाई देती है। वे लिखते हैं "किसान तृषित चातक की भाँति आसमान में पानी का भण्डार बहता देखता रहा। पानी उड़ रहा है कमी नहीं है पर मिल नहीं रहा।"[1] स्पष्ट है कि प्रस्तुत निबंध में प्राकृतिक असंतुलन के प्रति गहरी चिंता व्यक्त की है। इस स्थिति में ऋतु चक्रों में असमानता होने लगी है और मौसम की अपनी स्वाभाविक स्तिथि स्थिर नहीं रह पाती है। जिसके परिणामस्वरूप सर्दी के मौसम में कम सर्दी का पड़ना, पानी के मौसम में पानी का न बरसना अथवा अत्यधिक बरसना आदि जैसे कई परिवर्तन देखने को मिलते हैं। संक्षेप में लेखक ने प्रस्तुत निबंध में जल जैसे उपयोगी संसाधन पर चर्चा करते हुए वैश्विक समाज को यह संदेश दिया है कि जल जैसे महत्त्वपूर्ण संसाधनों का हमें हर हाल में संरक्षण करना अत्यंत आवश्यक है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों में पर्यावरणीय दृष्टि व्यापक है। उनका मानना है कि प्राकृतिक आपदाएं मनुष्य और पृथ्वी पर रहने वाले जीवों को अत्याधिक भयाक्रांत करती है। कभी-कभी तो यह आपदाएं लाखों लोगों के मृत्यु का कारण भी बनती है। वे अपने निबंधों में लिखते हैं कि मानव एवं पृथ्वी पर निवास करने वाले जीवों

ISBN-978-93-49938-50-2

के लिए इतना अधिक खतरा प्राकृतिक आपदाओं से नहीं है जितना कि मानव निर्मित शस्त्रों से है। आनेवाले समय में मानव निर्मित शस्त्र पर्यावरण तथा मानव दोनों के लिए अत्यधिक खतरनाक साबित होने वाले हैं। जापान को हिरोशिमा और नागासाकी इसके ज्वलंत उदाहरण है। सन् 1945 ई. में इन शहरों पर जब परमाणु बम गिराया गया तब लाखों लोगों की जानें चली गई। द्विवेदी का मानना है कि हमें धूमकेतु से डरने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि पृथ्वी के लिए इतना अधिक खतरनाक धुमकेतु नहीं है जितना अधिक मानव निर्मित शस्त्र है। वे लिखते हैं "1910 ई. में पृथ्वी बच गयी और उम्मीद की जानी चाहिए कि 1986 में भी बच जायेगी। अगर नहीं बच सकी तो उसका कारण धूमकेतु नहीं होगा, मनुष्य के बनाये मरणास्त्र होंगे।"[2]

स्पष्ट है कि द्विवेदी का यह मत काफी हद तक सही था। सन् 1986 ई. में भी धूमकेतु की इसी प्रकार की चर्चा थी, लेकिन पृथ्वी पर कोई आंच नहीं आयीं। वर्तमान समय में इस बात को विश्व के सभी वैज्ञानिक मानते हैं कि यदि भविष्य में अगर कोई विश्व युद्ध होता है या परमाणु बम जैसे शस्त्रों का उपयोग किया जाता है, तो पृथ्वी पर कुछ भी नहीं बचेगा, यह बहुत ही चिंता का विषय है। लेखक मानते हैं कि मनुष्य ने स्वयं ही अपने जीवन तथा पर्यावरण को नष्ट करने के साधन ढूंढ रखें हैं।

आधुनिक युग में वायु प्रदूषण एक जटिल समस्या बन चुकी है। वायु पर्यावरण का सबसे महत्त्वपूर्ण उपादान है। इसका पर्यावरण में विशेष योगदान है। संपूर्ण प्राणी मात्रा में वायु प्राणवायु के रूप में कार्य करता है। जल एवं भोजन के अभाव में हम कुछ दिन जीवित रह सकते हैं किंतु वायु के अभाव में क्षण भर के लिए भी जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती। समग्र जीवों और वनस्पतियों में वायु विद्यमान है। पृथ्वी और आकाश के बीच वायु तैरती रहती है। डॉ. बैजनाथ सिंह लिखते हैं "आकाश और वायु एक दुसरे से परिवेष्टित है आकाश में वायु है और जो कुछ भी आकाश में फैलता है वह वायु के सहारे

चलता है।"[3] स्पष्ट है कि वायु के बिना सब कुछ अर्थहीन एवं प्राणहीन है। आज मानव निर्मित स्वचलित वाहनों तथा कल-कारखानों से निसृत होने वाले धुएं से वायु प्रदूषण सर्वाधिक बढ़ चुका है। वायु में मिलकर ही विभिन्न प्रकार की विषैली गैसें जैसे कार्बन मोनो ऑक्साइड, हाइड्रो कार्बन, नाइट्रोजन ऑक्साइड, सल्फर डाई ऑक्साइड, क्लोरिन, अमोनिया तथा ओजोन पेड़-पौधों तथा जीव-जंतुओं को क्षति पहुंचते हैं। औद्योगिक धूल जैसी धातुओं की धूल और फैक्ट्रियों से निकलने वाला धुआं और राख भी हमारी जीवन रक्षक वायु को प्रदूषित कर रही है। वायु के विकराल वेग, आंधी, तूफान तथा चक्रवात के कारण प्रत्येक वर्ष लाखों जीव-जंतु, पेड़-पौधे नष्ट होते हैं। विकराल वेग से चलने वाली वायु से उपजाऊ जमीन बंजर होने का डर हमेशा बना रहता है। हवा के प्रभाव से ही बादल, बाढ़ और चक्रवात जैसी भीषण आपदाओं को जन्म देते हैं। 'वर्षा घनपति से घनश्याम तक' में आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी लिखते हैं "पेड़-पौधे भी त्राहि-त्राहि कर उठे। नन्द बाबा घबरा उठे, जसोदा मैया डर गयी, गोप बालकों और गोपियों के हृदय में शंका और भ्रांति के भाव घुमड़ आये... अशनिपात से वायुमंडल फटता रह गया, प्रचंड वायु के वेग से धरती कलमला कर रह गयी।"[4] स्पष्ट है कि लेखक ने प्रस्तुत निबंध में उस समय के प्रसंग को चित्रित किया है, जिस समय इंद्रदेव कुपित होकर गोकुल में भयंकर प्रलयकांड मचाते हैं। लेकिन आज के समय में भी इस प्रकार के भयावह तुफानों को देखा जा सकता है, जो इससे भी अधिक उग्र होते हैं। अतः कह सकते हैं कि वायु का विकराल रूप समस्त जैव जगत को प्रभावित कर सकता है। इससे व्यापक रूप में जन-धन की हानि भी होती है। एक अन्य स्थान पर लेखक ने वायु प्रदूषण पर अपनी गहरी चिंता जताते हुए 'मनुष्य का भविष्य' नामक ललित निबंध में अपने हृदय की गहरी पीड़ा को प्रस्तुत करते हुए लिखा है "वायुमंडल विषाक्त गैसों से ऐसा भरता जा रहा है कि मनुष्य का पर्यावरण दूषित हो उठा है, जिससे वनस्पतियों तक के अस्तित्व संकटापन्न हो

ISBN-978-93-49938-50-2

गये।"[5] स्पष्ट है कि आज समग्र विश्व में वायु प्रदूषण की मात्रा अत्यधिक रूप में बढ़ी है। वायु प्रदूषण से होने वाली संक्रामक बिमारियां समस्त जीवों को बुरी तरह से प्रभावित करती है। यदि वायु प्रदूषण की मात्रा में इसी तरह से बढ़ोत्तरी होती रही तो शीघ्र ही जो वायु मानव को जीवन प्रदान करती है, वहीं वायु जीव को नष्ट करने में देर नहीं करेगी।

भारतीय संस्कृति को 'अरण्य संस्कृति' या 'तपोवन संस्कृति' भी कहा जाता है। अनेक ऋषि-मुनियों ने विभिन्न प्रकार के मानव मूल्यों की प्रतिष्ठा करते हुए प्रकृति की सदैव रक्षा की है। वृक्षों को देवता मानते हुए शुकदेव प्रसाद लिखते हैं "हमारी भारतीय संस्कृति में वृक्षों को देवता माना गया है....जो वृक्ष फूल-पत्ते और फलों के बोझ को उठाए हुए धूप की तपन और शीत की पीड़ा सहन करता है तथा दूसरों के सुख के लिए अपना शरीर अर्पित कर देता है, उस वंदनीय श्रेष्ठ तरु को नमस्कार है।"[6] स्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति सदा से ही ऐसे महान विचारों से अनुप्राणित रही है। प्राचीन वेदों और ग्रंथों में प्रकृति को प्रथम स्थान प्राप्त है। वन संपदा भारतीय संस्कृति का मुख्य आधार है। यह हमारे प्रकृति के साथ-साथ अर्थव्यवस्था का भी महत्त्वपूर्ण अंग है। वन, पेड़-पौधों, वनस्पतियों तथा जीव-जंतुओं से आच्छादित क्षेत्र है। यह पर्यावरण को संतुलित बनाए रखने में हमारी सहायता करता है। ईंधन, अनाज, फल-फूल एवं आयुर्वेदिक औषधियां आदि हमें वृक्षों से ही प्राप्त होते हैं। अंतरिक्ष को शुद्ध करने में सबसे महत्त्वपूर्ण भूमिका अगर किसी की है तो वह वृक्षों की होती है। वृक्ष जलवायु के नियंत्रक है। वृक्ष कार्बन डाइऑक्साइड को ग्रहण कर आक्सीजन को उत्सर्जित कर मानव जीवन को सुरक्षा प्रदान करते हैं। किंतु आज करोड़ों वृक्षों को काट कर सड़कों का जाल बिछाया जा रहा है, रेल मार्ग बनाएं जा रहे हैं। वनों को काटकर उस स्थान पर कंक्रीट की बड़ी-बड़ी इमारतें खड़ी की जा रही है। जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण, औद्योगीकरण तथा वैज्ञानिक संचार प्रगति के कारण तेजी से वनों का विनाश हुआ है। द्विवेदी के ललित निबंधों में प्राचीन कालीन पेड़-पौधों के

समृद्धि की बात मुखर रूप से उजागर हुई है। उनके विचारों का मंथन किया जाएं तो यह स्पष्ट होता है कि उनके ह्रदय में पेड़-पौधों के प्रति बड़ी मात्रा में सहृदयता दिखाई देती है। उन्होंने 'कुटज' निबंध में रहीमदास के प्रसिद्ध दोहे के माध्यम से पर्यावरण ह्रास की ओर संकेत करते हुए दिखाई देते हैं-

"वे रहीम अब विरछ कहँ, जिनकर छांह गम्भीर।
बागन बिच-बिच देखियत, सेहुड़, कुटज करीर।"[7]

स्पष्ट है कि प्रकृति में बड़े-बड़े वृक्षों का निरंतर ह्रास हो रहा है। सेहुड़, कुटज और करीर जैसे कांटेदार वृक्ष रेगिस्तान में उगने वाले वृक्ष है। लेकिन आज इन वृक्षों की प्रजाति लगभग समाप्त होने के कगार पर खड़ी है। अतः रहीमदास की यह पंक्तियां जन-सामान्य में पर्यावरण के प्रति चेतना जाग्रत करने का प्रयास करती हुई दिखाई देती है।

प्राकृतिक पर्यावरण के विकास के साथ-साथ आज मानव को संपूर्ण विकास की भावना पर ध्यान देने की आवश्यकता है। जिसे संपोषित विकास भी कहा जाता है। द्विवेदी के ललित निबंधों में प्रकृति के उत्थान एवं विकास पर व्यापक रूप से चर्चा हुई है। इसके साथ ही उन्होंने विभिन्न प्रकृतिवादी कवियों जैसे कालिदास, सुमित्रानंदन पंत, महात्मा गांधी तथा रवींद्रनाथ टैगोर आदि के विचारों एवं प्रकृति प्रेम से बहुत कुछ ग्रहण किया है। द्विवेदी ने शिरीष को अवधूत की संज्ञा दी है। उनका मानना है कि कबीर भी अवधूत थे और गांधी भी। कबीर जैसे अवधूत ने मानवीय पर्यावरण स्थापित कर विभिन्न प्रकार की ऊंच-नीच, पाखण्डों और बुराइयों का खात्मा कर स्वस्थ मानवीय कल्याण की कामना की है। अवधूत का कार्य होता है कि वह अपने पराये की धारणा को त्याग कर निष्पक्ष भाव से समाज कल्याण और समाज सुधार करें। विपरित परिस्थितियों में भी अदम्य साहस का परिचय देते हुए संकट के क्षणों में अड़िग रहने की प्रवृत्ति सुख हो अथवा दुःख एक समान रहना चाहिए। यह सारी विशेषताएं शिरीष में प्राप्त होती है।

ISBN-978-93-49938-50-2

शिरीष एक पर्यावरणीय अवधूत है। वह अवधूतों की भांति अड़िग है। वह संकटों का साहस से सामना करता है। लेखक लिखते हैं "शिरीष एक अवधूत है दुःख हो या सुख वह हार नहीं मानता।"[8] अपने इस गुण के कारण ही शिरीष तपती हुई धूप में भी सरस है। शिरीष की भांति ही कबीर और गांधी ने भी विभिन्न कठिनाइयों का सामना करते हुए विपरीत परिस्थितियों में संकट का निःसंकोच सामना करते हुए सफलता प्राप्त की है। द्विवेदी ने समग्र पर्यावरण के कल्याण की धारा से जोड़ते हुए गांधी की तुलना शिरीष से की है। वे लिखते हैं "शिरीष वायुमंडल से रस खींचकर इतना कोमल और इतना कठोर है। गांधी भी वायुमंडल से रस खींचकर इतना कोमल और कठोर हो सका था।"[9]

स्पष्ट है कि लेखक ने यहां पर्यावरण को मानवीय तथा प्राकृतिक संपोषिण से जोड़ने का सफलतापूर्वक प्रयास किया है। इस प्रकार के वृक्ष वातावरण की गंदी हवा को छानकर कार्बन डाइऑक्साइड को स्वयं ग्रहण करते हैं और वायु को शुद्ध करते हैं। जीव मंडल के पशु-पक्षी इन्हीं की फूल-पत्तियों, फलों तथा उन पर रहने वाले छोटे-छोटे कीट-पतंगों को खाकर जीवित रहते हैं। अतः शिरीष जैसे वृक्षों पर ही पर्यावरण का चक्र आधारित है। वर्तमान समय में अति औद्योगीकरण, शहरीकरण और जनसंख्या विस्फोट के कारण असंतुलन और अव्यवस्था का साम्राज्य स्थापित हुआ है। आज की बढ़ती हुई नगरीय समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए द्विवेदी लिखते हैं "वर्तमान काल की भौतिक समृद्धि में उलझे हुए और भयंकर संभावनाओं से ग्रसित मानव समाज के लिए आज एक विषम समस्या उपस्थित हुई है।"[10]

स्पष्ट है कि नगरों और जनपदों में बढ़ती हुई आबादी और गांव के प्रति लोगों के मोहभंग के कारण ही आज नगरीय पर्यावरण प्रदूषण का जन्म हुआ है। इसी के कारण ही बड़े-बड़े नगरों में गंदगी फैला चुकी है और रोगों का प्रसार बढ़ चुका है।

निष्कर्ष

रूप में कह सकते हैं कि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंधों के गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन से प्राप्त बिन्दुओं पर विचार विमर्श किया जा सकता है। जिससे पर्यावरण जागरूकता उत्पन्न हो सकती है। साथ ही साहित्य, संस्कृति तथा प्रकृति से हमारा संबंध परस्पर स्थापित होता है। उन्होंने अपने ललित निबंधों में पृथ्वी, सूर्य, ऊर्जा, आकाश, वायु, सामाजिक पर्यावरण, आर्थिक पर्यावरण, सांस्कृतिक पर्यावरण तथा वैश्विक पर्यावरण की ओर व्यापक रूप से संकेत करते हुए पर्यावरण के दोहन पर गहरी चिंता प्रकट की है।

संदर्भ संकेत सूची

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली-9 - संपा. मुकुंद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 77
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली-9 - संपा. मुकुंद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 125
3. पर्यावरण रक्षा - बैजनाथ सिंह, एस. चन्द एण्ड कं.लि., नई दिल्ली, पृ. 135
4. हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली-9 - संपा. मुकुंद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 67
5. हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली-9 - संपा. मुकुंद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 451
6. पर्यावरण संरक्षण - शुकदेव प्रसाद, पृ. 11
7. हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली-9 - संपा. मुकुंद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 31

ISBN-978-93-49938-50-2

8. हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली-9 - संपा. मुकुंद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 27
9. हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली-9 - संपा. मुकुंद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्लीपृ. 28
10. हजारी प्रसाद द्विवेदी ग्रंथावली-9 - संपा. मुकुंद द्विवेदी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पृ. 423

हिंदी साहित्य में पर्यावरण के प्रति संवेदनशिलता

प्रा. तेजश्री मुरकुटे

शोध छात्रा

अनुसंधान केंद्र- न्यू आर्ट्स कॉमर्स अँड सायन्स कॉलेज, अहिल्यानगर

संस्थागत संबंधता - सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे – २८

आधुनिक हिंदी साहित्य में पर्यावरण चेतना का अर्थ है साहित्य में प्रकृति और पर्यावरण के महत्व को दर्शाना और पर्यावरण के प्रति चिंता व्यक्त करना। यह साहित्य में एक प्रमुख विषय बन गया है क्योंकि मानव जीवन और पर्यावरण एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। मनुष्य और पर्यावरण के घटकों से गहरा नाता है। प्रत्येक मनुष्य जीव पर्यावरण के साथ जुडा हुआ है और मुत्यृ के बाद पर्यावरण में समाहित हो जाता है। पर्यारवणीय शिक्षा से भावी पिढी के हृदय में पर्यारवणीय जागरुकता, प्रेमभाव और उसे सुरक्षित रखने के लिए सजगता का भाव उत्पन्न कर सके। पर्यावरण के साथ शिक्षा का सहसंबध समझने के लिए उससे संबधित साहित्य का अध्ययन करना आवश्यक है।

विषय-प्रवेश

हमारा शरीर पंचतत्व - पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश से बना है। यह पंचतत्व पर्यावरण के अभिन्न अंग हैं। हमारी भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से पर्यावरण की शुद्धता पर बहुत विचार किया जा रहा है। वेद और उपनिषद भी पर्यावरण की बात करते हैं। प्रकृति में वायु, जल, मिट्टी, पेड़- पौधों, जीव जंतुओं का जो संतुलन विद्यमान है, उसे ही हम पर्यावरण कहते हैं। पर्यावरण दो शब्दों के मेल से बना हैं - परि+आवरण। जिसमें परि का अर्थ है चारों तरफ तथा आवरण का अर्थ है ढके हुए। अर्थात हमारे आसपास जो कुछ भी हमें दिखाई देता है वह सब कुछ पर्यावरण है और

ISBN-978-93-49938-50-2

इस पर्यावरण के बारे में जानना, समझना, इसके लिए क्या उचित है क्या अनुचित इसका ज्ञान रखना ये सभी बातें पर्यावरणीय जागरूकता का विषय है। इन सब के अभाव में हम अपने जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकते। इस तरह हमारा जीवन पर्यावरण पर आश्रित है। प्राचीन काल से ही साहित्य में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण, प्राकृतिक दृश्य का चित्रण दिखाया गया है। आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक प्रकृति का भिन्न-भिन्न रूप साहित्य में दृष्टिगोचर होता है। विद्यापति की पदावली में प्रकृति वर्णन है, तो संत साहित्य के प्रवर्तक कबीर तथा जायसी की रचनाओं में प्रकृति का कई स्थलों पर रहस्यात्मक वर्णन हुआ है। तुलसी की रामचरितमानस का अशोक वाटिका हो या चित्रकूट प्रसंग सब में प्रकृति की महिमा बताई गई है। तुलसीदास जी ने रामचरितमानस में राम सीता को वृक्षारोपण करते हुए दिखाया है, जो वृक्ष के महत्व को दर्शाता है इस संबंध में एक पंक्ति है- "तुलसी तरुवर विविध सुहाए, कहुं,कहुं सीया कहुं लखन लगाएं।" आधुनिककाल में हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने निबंध 'कुटज'में लिखा है- "यह धरती मेरी माता है और मै इसका पुत्र हूँ। इसीलिए मै सदैव इसका सम्मान करता हूँ और मेरी धरती माता के प्रति नतमस्तक हूँ।"[1] इस तरह आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक में पर्यावरण दृश्य हमें कविता और कहानियों में दिखाई पड़ते हैं। समकालीन दौर में आए पर्यावरणीय विचार से यह अलग है। अलग इस मायने में है कि आधुनिक काल तक जो पर्यावरण के संबंध में हमारे साहित्य में लिखा गया वह पर्यावरण-विमर्श के तहत नहीं लिखा गया वहाँ मात्र उद्दीपन या आलम्बन रूप में प्रकृति चित्रण हुआ है। समकालीन दौर में जो साहित्य लिखा जा रहा है, उसमें पर्यावरण विमर्श सम्मिलित है। पर्यावरण में आए असंतुलन ने पर्यावरण -विमर्श को जन्म दिया ऐसा कहना गलत नहीं होगा।

वर्तमान दौर में पर्यावरण विमर्श एक महत्वपूर्ण विमर्श के रूप में हमारे समक्ष

आता है। समकालीन भारत में उत्तर आधुनिकता के साथ कई प्रकार के विमर्श जन्म लेते हैं जैसे-दलित विमर्श, किन्नर विमर्श, अल्पसंख्यक विमर्श, पर्यावरण विमर्श, दिव्यांग विमर्श इत्यादि। पर्यावरण के प्रति जागरूकता फैलाने के लिए ही हम प्रत्येक वर्ष 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस मनाते हैं। वन विभाग के सभी पदाधिकारी, कर्मचारी सहित शिक्षण संस्थाओं तथा अन्य विभिन्न संस्थाएं इस दिवस को हर्षोल्लास के साथ मनाते हैं। कुछ लोग इस दिन पर्यावरण-दिवस के सुअवसर पर पौधारोपण का कार्य करते हैं। ये सभी कार्य हमारे पर्यावरण को सुरक्षित व संरक्षित करने में किया गया एक कार्य है। यह प्रकृति के प्रति हमारे दायित्व को बताता है।

आधुनिक काल मे हिन्दी के अनेक कवियों ने पर्यावरण के संदर्भमें चिंता व्यक्त की है। आज के बढ़ते तकनीकी एवं औद्योगीकरण के समय में त्रिलोचन, केदारनाथ सिंह, रामदरश मिश्र, अरुण कमल, ज्ञानेंद्रपति, अशोक पजपेयी, शिशुपाल सिंह जैसे कवियों ने अपनी कविताओं में इस तथ्य को बखूबी उभारने की कोशिश की है। ये कवि पर्यावरण प्रदूषण की समस्या को एक गंभीर विषय के रूप में अपनाकर, आज की ज्वलंत समस्या पर्यावरण –प्रदूषण का चित्रण अपनी रचनाओं मे करके हमारे बीच जागरूकता फैलाते हैं। हिन्दी के वरिष्ठ कवि ज्ञानेंद्रपति ने भी अपनी अनेक कविताओं में पर्यावरण प्रदूषण के बढ़ते आतंक का चित्रण किया है। इनकी कविता विशेष अर्थ में सामाजिक एवं सांस्कृतिक विमर्श की कविता है। पर्यावरण विमर्श से सम्बन्धित उनकी कई कविताएँ हैं। “गंगास्नान”, “गंगातट” काव्य संग्रह की एक कविता है। इसमें कवि ने एक बूढी, जर्जर स्त्री की गंगास्नान की आखिरी इच्छा को चित्रित किया है। इस जर्जर स्त्री के मन में गंगा आस्था की ज्योति है। लेकिन कवि का मन मानने को तैयार नहीं है क्योंकि आज गंगा मलिन है।

“गंगा मे स्नान कर रही

ISBN-978-93-49938-50-2

वह बूढी मैया...
अपने प्राणों तक को प्रक्षालित कर रही है, पवित्र कर रही है
महाप्रस्थान-प्रस्तुत, डगमग पांवों वाली वह बूढी मैया
तुम क्या जानों, क्योंकि तुम्हारे लिए नहीं बची है कोई पवित्र नदी
तुम्हारी सारी नदियाँ अपवित्र हो गई हैं-विषाक्त
तुम्हारे हत्पिंड की गंगोत्री सूख ही गई है
पीछे और पीछे खिसकती, आख़िरकार"[2]

इसके अलावा पर्यावरण विमर्श के सन्दर्भ में एक महत्वपूर्ण कविता है –"नदी और साबुन" जो "गंगातट" काव्य संग्रह की ही महत्वपूर्ण कविता है। नादियों को प्रदूषित होता देख ज्ञानेंद्रपति ने इस कविता में नदी को लेकर चिंता जताई है। वे इस कविता में नदी से पूछते हुए कहते हैं-

"नदी!
तू इतनी दुबली क्यों है?
और मैली कुचली ...
मरी हुई इच्छाओं की तरह मछलियाँ क्यों उतराई हैं?
तुम्हारे दुर्दिन के दुर्जल में ,
किसने तुम्हारा नीर हरा,
कलकल में कलुष भरा।
बाघों के जुठारने से तो
कभी दूषित नहीं हुआ तुम्हारा जल ...
आह! लेकिन
स्वार्थी कारखानों का तेजी पेशाब झेलते

बैगनी हो गई तुम्हारी शुभ्र त्वचा
हिमालय के होते भी तुम्हारे सिरहाने
हथेली भर की एक साबुन की टिकिया से
हार गई तुम युद्ध ”[3]

कवि ने इस कविता के माध्यम से दिखाया है कि नदियों की स्वच्छता एवं पवित्रता नष्ट हो गई है। नदी जो पहले स्वच्छ हुआ करती थी अब वह मैली कुचैली एवं क्षीण हो गई है। नदी के बुरे दिनों के गंदे जल में मरी मछलियाँ उतर रही है। कवि की रुष्टता भी इस कविता मे दिखाई देती है। वह नाराज होकर पूछता है कि किसने नदी के पवित्र जल को मलिन किया? बाघों के पानी पीने से नदी का जल कभी दूषित नहीं हुआ। कछुओं के दृढ़ पीठों से उलीचा जाने पर भी नदी का जल कम नहीं हुआ। स्वार्थी लोगों ने अपने क्षुद्र स्वार्थों एवं आर्थिक दृष्टीकोण से कारखानों की भरमार कर दी है। इन कारखानों से रिसते तेजाब से नदी का शुभ्र जल अपनी शुभ्रता खोकर बैंगनी हो गया है। हिमालय नदी के सिरहाने में है। वह पर्वताधिराज हिमालय की पुत्री है। किन्तु वह आज एक साबुन के टिकिया से अपने अस्तित्व का युद्ध हारने में अभिशप्त है। पोलिथिन जिसका प्रयोग हम आज सभी प्रचुर मात्रा में करते हैं चाहें बाजार से सब्जियां लानी हो या फिर कोई अन्य घरेलू सामग्री। इसके प्रयोग ने जल, वायु और भूमि सभीको दूषित कर दिया है। जल, वायु और भूमि के दूषित होने से अनेक रोगों तथा विकारों का जन्म होता है। निरंतर बढ़ते जा रहे पोलिथिन का उपयोग मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत हानिकारक सिद्ध हो रहा है। पोलिथिन के बेहद उपयोग व उनसे होने वाली समस्याओं को लीलाधर मंडलोई ने ‘पोलिथिन की थैलियाँ’ शीर्षक कविता मे कवि ने पोलिथिन से उत्पन्न भयावह त्रासदी की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है। इस समस्या का चित्रण कुछ इस तरह किया है –

ISBN-978-93-49938-50-2

"करोड़ों या अरबो
कितनी हो सकती हैं
पालिथिन की थैलियाँ
कितनी नदियों का दम घुट सकता है
इन थैलियों में
पालिथिन ! पालिथिन !
तंग हूँ मैं इस पालिथिन से।"[4]

कथा साहित्य की बात करें तो मेहता नगेंद्र सिंह समकालीन हिन्दी कथा के प्रमुखहस्ताक्षर और समकालीन हिन्दी कविता के एक ऐसे महत्वपूर्ण कवि हैं जिन्होंने हिन्दी कविता को नयी दिशा एवं नूतन दृष्टि प्रदान की है। कहानियाँ अंतर्मन को कुरेदने को विवश करती हैं। पर्यावरण चेतना और जागरूकता से संबंधित इनकी एक लघु कथा है-'वृक्ष ने कहा ' जिसमें यह बताया गया है कि एक बरगद के वृक्ष ने किस प्रकार लोगों को यह सीख दी कि हरे-भरे कोमल वृक्षों को काटा जाना किसी भी प्रकार उचित नहीं है। चाहे उसे लकड़ियां पूजा-अर्चना के कार्य में ही क्यों ना लाया गया हो। बंजर जमीन को उपजाऊ बनाकर किस प्रकार हम उसमें वृक्षारोपण कर अपनी आर्थिक स्थिति को अच्छी कर सकते हैं तथा दूसरे की भी मदद कर सकते हैं इसको भी इस लघु कथा में बताया गया है। परोपकार की भावना के साथ एक वृक्ष किस प्रकार दधिचि वृक्ष बन गया इसका विवेचन भी एक उनकी लघु कहानी जिसका शीर्षक है 'वृक्ष-दधीचि' में किया गया है। जिसमें दिखाया गया है कि कैसे एक बालक रोजाना एक विशालकाय वृक्ष के नीचे अपने सहपाठियों के साथ खेलने के लिए आता है, अचानक एक दिन उस बालक का आना, खेलना बंद हो गया। वृक्ष को उसका इंतजार था वह चिंतित रहने लगा। काफी दिनों के बाद वह बच्चा वृक्ष के पास आया वृक्ष कारण जानना चाह रहा था वह बच्चा भी

उसकी भाषा समझ कर कहा- "मैं बीमार था मेरे पिता भी बीमार हैं बैलून खरीदने के लिए मुझे पैसा चाहिए था। उसकी बात को सुनकर वृक्ष ने कहा- "प्यारे बच्चे मैं पैसा तो नहीं दे सकता पर अपना फूल फल अवश्य दे सकता हूँ। तुम उन्हें बेचकर पैसा पा सकते हो। इतना कह कर वृक्ष ने अपना सिर हिला दिया उसके फूल फल धरती पर बिछ गए। वह बच्चा उस वृक्ष के फूल फल लेकर चला गया फिर उसका आना बंद हो गया। इसी बीच बच्चा बड़ा हो गया, तरुण हो गया अब उसका विवाह भी हो गया था कुछ सालों बाद वह पुनः उसी वृक्ष के पास आया और बोला- "हे वृक्ष बाबा मुझे अपने परिवार के लिए एक घर चाहिए।" वृक्ष ने प्यार जताते हुए कहा- "मैं तुझे घर तो नहीं दे सकता यदि चाहो तो मेरी शाखाएं काट कर अपना घर बना लो।" बालक उसकी शाखाएँ लेकर चला गया उससे अपना घर बनवाया और घर बनाने के कुछ दिन बाद वह पुनः वृक्ष के पास आया और बोला- "बृक्ष बाबा मुझे व्यापार के लिए एक नाव चाहिए।" इस पर वृक्ष बोला- "मेरे धड़ के ऊपर वाला तना ले लो नाव बन जाएगी।" उस जवान नवयुवक ने वैसा ही किया। फिर वह नवयुवक धीरे धीरे प्रौढ़ हो गया। एक दिन वह अपनी प्रौढ़ावस्था में वृक्ष के पास आया शायद धन्यवाद देने के लिए। अबकी बार उसके कुछ मांगने के पहले ही वृक्ष अपनी कांपते स्वर में बोला-"अब तो मै ठूंठ बन गया हूँ। मेरे पास देने को कुछ बचा नहीं है यदि चाहो तो यह ठूंठ भी ले जा सकते हो। "इस पर वह लालची प्रौढ़ घर एवं व्यापार के लिए उस ठूंठ पेड़ को भी लेता गया।"[5] इस तरह इस कथा के माध्यम से हमें वृक्ष की परोपकारिता के बारे में बताया गया है कि किस तरह से वृक्ष निस्वार्थ व निःशुल्क, परार्थ की भावना से हमें अपना सबकुछ समर्पित कर देते हैं। शीर्षक की दृष्टि से इस कथा को 'वृक्ष दधिचि 'नाम उचित ही दिया गया है। जिस प्रकार महर्षि दधीचि ने बिना अपनी परवाह के देवताओं को अपनी हड्डी समर्पित कर दी थी उसी प्रकार वृक्ष भी

ISBN-978-93-49938-50-2

हमें अपना सब कुछ दे देते हैं। हमारे लिए ऑक्सिजन (जीवनदायिनी हवा) से लेकर लकड़ियाँ, घर, फल फूल सभी। वास्तव में यह दधीचि की तरह महादानी होते हैं।

मेहता नरेंद्र सिंह ने अपने लघु कथाओं में वृक्ष को कहीं दधीचि के समान महादानी बताया है तो कहीं किसी व्यक्ति के सुखी संपन्न होने में वृक्ष कितना महत्व रखता है इसका विवेचन किया है कहीं पानी की महत्ता, उसके विस्तार पर चर्चा है तो कहीं पानी के बढ़ते संकट पर, तो कहीं स्वयं हमारी धरती माँ पत्र लिखकर सामान्य जन से अपनी पीड़ा को बताती हैं। एक पत्र में धरती माँ कहती हैं- "तुम लोग खुश हो या नही, चैन से हो या बेचैन हो, पता नहीं। मैं तो वैश्विक ताप से तप रही हूँ। असह्य वेदना से तड़प रही हूं। यह कह कर तुम्हें किसी प्रकार का कष्ट देने की मेरी मनसा नहीं है। मैं माँ हूं, अपने बच्चों को कष्ट नहीं दे सकती। कष्ट देना तो दूर, मैं तुम्हें कष्ट में देख भी नहीं सकती। तुम सभी ने मुझे अपने अपने ढंग से कष्ट दिए, तपिश दी। मुझसे मेरी हरीतिमा छीनी। मेरे सुहाग -श्रींगार को नष्ट किया।"[6] इसी तरह पानी की प्रकृति को एक लघु कथा पानी में कुछ इस तरह वर्णित किया गया है-" पानी हूँ। प्रकृति प्रदत्त, अमृत धन, जीवन तत्व। गरीब-अमीर एवं अन्य सभी जीवधारियों के लिए बना हूँ, नि:शुल्क वितरण की प्राकृतिक सामग्री। यही कारण है कि धरती पर जीवधारियों के उद्भव के पूर्व सृष्टिकर्ता के द्वारा मेरा सृजन किया गया, ताकि प्रत्येक जीवधारी मुझे ग्रहण कर अपने को गतिशील बनाते हुए विकसित करता रहे। तरल हूँ, रंगहीन हूँ एवं गंधहीन हूँ। धरती की चट्टानी कोख से प्रस्फुटित होकर झरनों एवं नदियों के माध्यम से आप तक पहुंचता रहा हूँ। आकाश से भी बरसता रहा हूँ धरती पर लगभग तीन- चौथाई भाग में आच्छादित हूँ। कूप, तालाब और जलाशय में संग्रहीत हूँ। सागर मेरा सबसे बड़ा संग्रहालय है। परन्तु, वहां खारा हूं। सिर्फ समुद्र और बादल बनने के काम आता हूँ।"[7] समकालीन दौर का पर्यावरण साहित्य बताता है कि किस प्रकार प्रकृति का अतीत गौरवशाली रहा और धीरे-धीरे नील गगन,

मलयज पवन, पावन निर्मल जल और हरियाली से युक्त प्रकृति किस प्रकार मानवी अत्याचार से क्षत-विक्षत हो गयी। कुल्हाड़ियों के भय से जंगल कराहने लगा। हमारी अन्नपूर्णा मिट्टी जहरीली हो गई। जैव विविधता चरमरा गयी; देखते-देखते सुंदर श्रृंगारित पृथवी विधवा हो गई।

निष्कर्ष-

पर्यावरण के प्रति हमारा यह कर्तव्य बनता है कि हम विकास के हर कदम पर पर्यावरण की सुरक्षा का दाइत्व भी उठाएं। प्रदूषण को रोकने का हमें एक अटूट संकल्प करना होगा। आधुनिक काल के साहित्यकारों ने सच्चाइयों को संवेदना के स्तर पर उजागर करने की सार्थक कोशिश हुई है, जिसमें पर्यावरण जागरूकता का एक प्रमुख स्थान है। पर्यावरण पर विमर्श (बात-चित) ने यह विचार दिया है कि हमारी वर्तमान पीढ़ी और हमारी आने वाली पीढ़ी को यह पता चले कि नदी के सौन्दर्य को किस प्रकार देखना है, पेड़ों के बीच चलती मंद हवाओं की आहटों को हम उसके संगीत को किस प्रकार सुने, पक्षियों की कलरव को किस प्रकार से सुने इत्यादि इत्यादि। समकालीन दौर के साहित्य में पर्यावरण के बारे में जागरूकता काफी बढ़ी है-विशेषकर भारत जैसे आबादी बहुल देश के लिए जहाँ कृषि और उद्योग के कारण धरती पर बहुत अधिक दबाव पड़ता है और इस दबाव के परिणाम खतरनाक होते हैं ऐसी स्थिति में पर्यावरण के मुद्दे को गंभीरता से लेने की जरूरत है ताकि आने वाली पीढ़ी के लिए हम अपने इस सबसे सुंदर ग्रह पृथ्वी को सुरक्षित रख सके।

संदर्भ -

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी, कुटज (निबंध),पृ.सं.32

2. समकालीन हिन्दी साहित्य में पर्यावरण विमर्श, सं.डॉ.ए.ऐस.सुमेष, पृष्ठ सं.28

3. समकालीन हिन्दी साहित्य में पर्यावरण विमर्श, सं.डॉ.ए.ऐस.सुमेष, पृष्ठ सं.21

ISBN-978-93-49938-50-2

4. पत्रिका,प्रगतिशील वसुधा, अप्रैल जून 2008 , पृ.सं.104

5. वृक्ष ने कहा, मेहता नगेन्द्र सिंह,पृ.सं.7

6. धरती की पाती, वही,पृ.सं.28

7. वेब सर्च

'हिंदी साहित्य में पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता

श्रीमती ऋजुता हेमंत चतुर

शोध छात्रा

संशोधन केंद्र: प्रो. रामकृष्ण मोरे कला वाणिज्य एवं विज्ञान महाविद्यालय,

आकुर्डी, पुणे 411044

संस्थागत संबंधता - सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे – २८

ईमेल आय डी – rujutah@gmail.com

सारांश

साहित्य समाज का आइना है। साहित्य में समाज, राष्ट्र और व्यक्ति के संपूर्ण जीवन का विवरण प्रतिबिंबित होता है। हम किसी भी साहित्य से ही समाज की, देश की एवं विश्व की परिस्थितियों की कल्पना कर सकते हैं। यही नहीं भविष्य का अनुमान भी कर सकते हैं। हमारे हिंदी साहित्य की बात ही अलग हैं इसमें कोई भी ऐसी श नहीं जिसमें प्रकृति का चित्रण ही नहीं अपितु मानव जाति की सम्पूर्णता के लिए उसे अत्यंत आवश्यक बताया गया हैं। यदि हम अपना अस्तित्व बनाए रखना चाहते हैं तो प्रकृति के प्रति संवेदना को अपने जीवन में प्रथम स्थान देना ही पड़ेगा।

आदिकाल से लेकर वर्त्तमान समय तक जो भी परिवर्तन समाज में हुए वह साहित्य में आये लेकिन अकेले नहीं पर्यावरण को साथ लेकर जब मानव एवं पर्यावरण एक दूसरे के पूरक है तो यह स्पष्ट है कि जब तक पर्यावरण रहेगा तब तक मानव भी। मनुष्य ने समूह बनाकर साथ रहना सीखा आदिम-काल से तभी से वह प्रकृति के प्रति संवेदनशील बना है जिसे हम 'भीम बेटका' की गुफाओं मे चित्र के माध्यम से देख सकते है यह साहित्य की शुरुवात नहीं तो क्या है? जिसमें आदि मानव प्राणियों एवं पेड़ पौधो की सानिध्य में दिखाई देता है।

ISBN-978-93-49938-50-2

हिंदी साहित्य में जितने तेजस्वी साहित्यकार और कवि हुए है, उन्होंने संवेदना पूर्ण प्रकृति वर्णन किया है जिसमें सुर, तुलसी, बिहारी, पद्माकर से लेकर यह सफर शुक्ल जी, द्विवेदी जी, प्रेमचंद, मैथिलि शरण गुप्त और अब आधुनिक समय में राजीव, काशीनाथ सिंह, बलराम कांवर इन समकालीन हिंदी साहित्यकारों तक आता है।

साहित्यकारों का उद्देश्य तभी सफल होगा जब हम भी प्रकृति को जानेंगे, समझेंगे, उनके प्रति आस्था बनाये रखेंगे नहीं तो वह दिन दूर नहीं जब हमें प्राणवायु और पानी भी कीमत देकर साथ ही लम्बी प्रतीक्षा कर प्राप्त होंगे।

मूल शब्द : पर्यावरण, सम्पूर्णतः, अस्तित्व, लौकिक, उत्तरदायित्व, ब्रम्हांड, प्रौद्योगिकी

परिचय

भारतीय साहित्य विशेष रूप से हिंदी साहित्य जिसमे दर्शन के साथ प्रकृति एवं उसकी सुरक्षा का उत्तरदायित्व शामिल है यह सब इतनी सूक्ष्मता से चित्रित किया है और उसका महत्व उसी प्रकार से है जैसे शरीर में श्वास। हमारे प्राचीन ग्रंथो से लेकर लौकिक ग्रंथो तक जल, वायु, अग्नि, वृक्ष, विभिन्न प्रकार के जीव, भूमि इन सब की पूजा पर विशेष जोर दिया गया है। हिंदी साहित्य में शब्द 'पर्यावरण' एक विशेष अर्थ लेकर आता है जिसमें निहित घटक सजीव एवं निर्जीव के मध्य एक सौहार्द्रपूर्ण एवं सुरक्षात्मक बन्ध का निर्माण करते है। इसमें पर्यावरण के दोनों रूपों को स्थान दिया है। इस शब्द में सारा ब्रम्हांड ही समा जाता है। हमारे साथ हमारे चारो और जो कुछ भी है वह पर्यावरण ही है। आदि कवि वाल्मीकि को काव्य प्रेरणा क्रौंच के जोड़ो को देख कर ही मिली थी, कालिदास का संपूर्ण रचना विस्तार प्रकृति से ही जन्मा है, रामचरित मानस में राम द्वारा सीता का पता वृक्ष, लताओं, पशु पक्षिओं को ही पूछा गया है, रामायण में जटायु का उल्लेख बहुश्रुत हैं। इसके अलावा वानर, गिलहरी, और भी न जाने कितने पशु- पक्षी, नदियाँ, समुद्र ये सभी प्रकृति के उपादान हमारे हिंदी साहित्य में समाहित हैं। हमारे साहित्य में वृक्षों की पूजा कर उन्हें सन्मान प्रदान किया गया हैं हम मानवो का उत्तरदायित्व यह बनता हैं कि प्रकृति को बचाना हैं।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, 'कुटज' में लिखते हैं कि- "यह धरती मेरी माता हैं,

मैं इसका पुत्र हूँ इसलिए मैं इसका सदैव सन्मान करता हूँ और मैं मेरी धरती माता के प्रति नतमस्तक हूँ।"

छायावाद तो प्रकृति से ही जन्मा हैं इनके चार आधारस्तम्भ जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा, सुमित्रानंदन पंत एवं सूर्यकांत त्रिपाठी निराला साथ ही मुकुटधर पांडेय, नंद दुलारे वाजपेयी, हरिवंशराय बच्चन इन सभी ने प्रकृति और पर्यावरण को साथ साथ संजोया हैं। आधुनिक कल के महाकाव्य 'कामायनी' ने प्रकृति का दोहन हमारे संस्कृति में निषिद्ध हैं यह बताया हैं आगे 'चिंता' सर्ग में चेतावनी दी गयी हैं की मनुष्य के अवसाद (डिप्रेशन) निराशा का कारण स्वयं मनुष्य हैं, जो प्रकृति मानव में आशा का संचार करती हैं उसी को मनुष्य समाप्त करने पर लगा हैं यह तो मानव अपनी ही पाँव पर कुल्हाड़ी मरने वाली बात हो गयी हैं।

प्रयोगवादी काल के प्रवर्तक अज्ञेय एक असाधारण बात कहते हैं वे अपनी प्रसिद्ध लम्बी कविता 'असाध्यवीणा' में अहम् का त्याग करने की बात करते हैं एवं मनुष्य यदि प्रकृति का साथ दे तभी वह सांकरणा से व्यापक बन सकता हैं और तभी वह पर्यावरण के प्रति संवेदनशील बनकर पर्यावरण संरक्षक के पथ पर अग्रसर होकर विश्वकल्याण को साध्य कर सकता हैं। लेखक जैनेन्द्र भी अपनी कहानी 'तत्सत' में पेड़, पौधे, प्राणी, जंगल सभी को एक सूत्र में बांधते हुए सर्वव्यापी चेतना का विस्तार के दर्शन करते हैं।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के प्रसिद्द निबंध 'अशोक के फूल', 'आम फिर बौरा गए' के माध्यम से संपूर्ण मानव जाति के भविष्य को अधोरेखित किया हैं। ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन, जल एवं वायु प्रदुषण, मानव का स्वकेन्द्रित दृष्टिकोण ये सब मानव के लिए हानिकारक हैं यह बताया हैं। कामायनी संभवतः पहली रचना हैं, जिसमें प्रकृति एवं पर्यावरण दोनों को अलग-अलग करके देखा गया हैं एवं पर्यावरण असुंतलन की समस्या पर विचार किया गया हैं।

"प्रकृति रही दुर्जेय, पराजित
हम सब थे भूले मद में

ISBN-978-93-49938-50-2

भोले थे, हाँ तिरते केवल
सब विलासिता के नद में।"

विख्यात पर्यावरणवादी अनुपम मिश्रा की कृति 'आज भी खरे हैं तालाब' में पर्यावर्णीय संवेदना की श्रेष्ठ अभिव्यक्ति हैं। प्रभाकर श्रोत्रिय 'ज्ञानोदय' का पूरा एक अंक पानी जैसे महत्वपूर्ण विषय पर निकाला था। जल, जंगल तथा ज़मीन जैसे पर्यावरणीय विषयों को केंद्र में रख कर हिंदी साहित्य की प्रसिद्द पत्रिकाएँ समय-समय पर विशेषांक प्रकाशित करती हैं। प्रेमचंद ने 'पूस की रात में' संपूर्ण प्रकृति को अपनी लेखनी के माध्यम से साकार किया हैं। 'दो बैलो की कथा' संवेदना के स्तर को ऊंचा उठाती हैं। महादेवी वर्मा ने 'पथ का साथी' में सोना हिरनी, गिल्लू गिलहरी को अमर कर दिया है। हम प्रकृति का ही एक अविभाज्य अंग है हम उनसे अलग नहीं यह बार बार हमारा हिंदी साहित्य मानव मन पर अंकित करता रहता है।

रिपोर्ताज़ में फणीश्वरनाथ रेणु लिखित 'ऋण जल - धन जल में बाढ़ एवं सूखे का निरिक्षण कर लिखा गया जो 'दिनमान में प्रकाशित हुआ जो हमारी बहुमूल्य धरोहर है। यात्रा वृत्तांतों में 'चिड़ो पर चांदनी' निर्मल वर्मा द्वारा लिखा गया 'अरे, यायावर रहेगा याद' अज्ञेय द्वारा लिखा गया जिसमें प्रकृति के साथ इन लेखकों ने रागात्मक सम्बन्ध दर्शाया है। हिडिम्बा (हरीनारे), कुइयाँजान (नासिरा शर्मा) अदि उपन्यासों में पर्यावरणीय चिंतन गंभीरता से हुआ हैं।

'रह गयी दिशाएँ ऐसी पार' (संजीव) में क्लोनिंग एवं जेनेटिक्स के परिणामों के फलस्वरूप समाज में होनेवाली विकृतियों की और संकेत किया हैं और अति संकीर्णता की मानसिकताओं को बताया हैं। वही दूसरी और कुइयाँजान में लेखिका जलसंरक्षण के प्रति हमारे प्रयासों को बताती हैं।

" साँप कविता में अज्ञेय कहते हैं - साँप तुम सभ्य तो हुए नहीं
नगर में बसना
भी तुम्हे नहीं आया
एक बात पूछू (उत्तर दोगे ?)

तब कैसे सीखा डसना,

विष कहा पाया

प्रसिद्ध जनवादी लेखक स्वयंप्रकाश ने प्रायः सभी विधाओं में लिखा हैं, उनकी 'बलि' कहानी भूमंडलीकरण का सबसे घातक प्रभाव हमारे पर्यावरण एवं आदिवासी समाज पर पड़ा हैं। इस कहानी में बड़ी मार्मिकता से उजागर किया हैं। उन्होंने पर्यावरण को अपनी कहानियों में महत्वपूर्ण स्थान दिया हैं। वे अपनी समस्त रचनाओं में प्रकृति एवं पर्यावरण के सम्बन्धो को उजागर करते हैं तथा मानव पर्यावरण के साथ प्रेमपूर्वक एवं सामंजस्य के साथ रहना चाहिए इसे समझाने का प्रयास करते हैं। 'जंगल का दाह' में मनुष्य का स्वार्थी दृष्टिकोण, प्रकृति की सुंदरता एवं मानव की प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भरता कहानी के माध्यम से दर्शाते हैं। नए रचनाकारों में बलराम कावट ने 'मोरीला' में राजस्थान के प्रकृति को महत्वपूर्ण स्थान दिया जो उल्लेखनीय हैं। भारतीय उपद्वीप में २०२८ को सबसे बड़े जलसंकट के रूपमें चिन्हित किया हैं। धरती से आकाश तक अधिकार करने और चाँद को पर्यटक स्थल बनाने की योजना करनेवाले केवल शुद्ध व्यावसायिक मानसिकता के लोगों के लिए पर्यावरणीयः सुरक्षा का क्या अर्थ हैं? जलवायु परिवर्तन के कारण जानवरों की एक चौथाई प्रजातियाँ खतरे में हैं, मधुमक्खियों में फूलों के गंध पहचानने की क्षमता कम हो गयी हैं और न जाने कितना ही पर्यावरण का नुकसान उठाना पड़ रहा हैं यह दौड़ कब रुकेगी ? कहाँ रुकेगी? या मनुष्य का अंत होने पर ही रुकेगी? प्रौद्योगिकी का विकास तथा वैज्ञानिक दक्षता के आधार पर मानव ने कृषि, सिंचाई, खनन, उद्योग, परिवहन, भूमिप्रबंधन अदि क्षेत्रों में तीव्र गति से विकास किया हैं परन्तु दुर्भाग्य से इन सब में पर्यावरण का ह्रास ही हुआ हैं।

“हैलो मनुष्य

मैं आकाश हूँ

कल सृजन था निर्माण था

आज प्रलय हूँ विनाश हूँ

मेरी छाती में जो छेद हो गए हैं काले-काले

ISBN-978-93-49938-50-2

वे तुम्हारे भाले के घाव हैं
यह कभी नहीं भरने वाले" (ऋषभ देव शर्मा)

सन्दर्भ :

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी, ग्रंथावली हजारी प्रसाद द्विवेदी 'कुटज' अंक ९ (राजकमल प्रकाशन)
2. कामायनी, जयशंकर प्रसाद, प्रथम संस्करण १९९३
3. समकालीन भारतीय साहित्य, प्रोफेसर राम, (वाणी प्रकाशन)
4. नरेश अग्रवाल माध्यम सहस्त्रादि, अंक ९ (संपादक डॉ. सत्यप्रकाश मिश्रा)

ज्ञानेन्द्रपति की 'नदी और साबुन' कविता में पर्यावरण चेतना

प्रा. कांबळे राहुल सोपान

जामखेड महाविद्यालय, जामखेड

तह- जामखेड, जि. अहिल्यानगर

Email ID- rahulkamble0115@gmail.com

प्रस्तावना

इन दिनों वर्षा की कमी सर्वत्र चिंता का विषय बनी हुई है। वैज्ञानिक ही नहीं, एक साधारण व्यक्ति का भी मानना है कि पर्यावरण संरक्षण के प्रति बरती गई लापरवाही का परिणाम है यह सूखे जैसी स्थिति। वनों की अंधाधूंध कटाई प्राकृतिक संतुलन नष्ट कर रही है तो दूसरी ओर तेजी से बढ़ती हुई बेलगाम जनसंख्या ऐसी अनेक समस्याऐं उत्पन्न कर रही है। कुछ लोग पर्यावरण के प्रति उपेक्षा को आधुनिक विकास प्रक्रिया का अनिवार्य हिस्सा मानते हुए इसके अध्ययन की बात करते हैं। सच्चाई यह है कि पर्यावरण को शुद्ध पवित्र रखने की बात नई नहीं है। हमारे प्राचीन ग्रंथ इसके प्रति संवेदना और संचेतना का संदेश देते हैं। पर्यावरण शब्द पर 'परि' तथा 'आ' उपसर्ग पूर्वक 'वृ' आवरण धातु से ल्युट प्रत्यय लगाने से बना है, जिसका अर्थ है- आज काच तुर्तिक आवरण। चेतन जगत के चारों ओर का ही समस्त अनुक्रियाओं को सम्पन्न करता है, प्रकृति की वह व्यवस्था पर्यावरण है सामान्यतः वायु, जल, जीव-जन्तु, पेड़-पौधे, ध्वनि, तापक्रम, नमी, सजीव व निर्जीव सभी मिलकर पर्यावरण का निर्माण करते हैं। वस्तुतः 'पर्यावरण' शब्द तो 'पौराणिक काल' से ही प्रयुक्त होने लगा था।

विषय विस्तार

जलप्रदूषण आज चिंता का विषय है। कल कारखानों से उत्सर्जित होने वाला रासायनिक पदार्थ तथा शहरों के कचरे को नदियों के जल में प्रवाहित कर दिया जाता है,

ISBN-978-93-49938-50-2

जिससे जल प्रदूषित हो गया है। धवल हिम से आच्छादित हिमालय से निकली श्वेत गंगधारा पृथ्वी पर पहुंचकर क्या से क्या हो जाती है, इसका चित्रण ज्ञानेन्द्रपति की गंगा-प्रदूषण से संबंधित दो महत्त्वपूर्ण कविताएँ 'नदी और साबुन' तथा 'नदी औरसाबुन'। में बखूबी किया है। पहली कविता में कवि नदी को संबोधित करते हुए पूछता है-

"नदी!
तू इतनी दुबली क्यों है
और मैली – कुचैली
मरी हुई इच्छाओं की तरह मच्छलियाँ क्यों उतराई हैं
तुम्हारे दुर्दिनों के दुर्जल में"

कवि को नदी मैली-कुचैली दिखाई पड़ रही है और नदी के इस गंदे जल में मरी हुई मछलियाँ सतह पर उतरा रही है। नदी बड़ी गहरी है पर उसकी धारा सिमट गई है, उसका दुग्ध-धवल जल मैला-कुचैला लग रहा है, गोता लगाने और जल-क्रीड़ा करने वाली मछलियाँ मर गई है, सतह पर उतरा रही हैं। क्यों ऐसा हुआ? कौन हैं वे जिन्होंने नदी के जल का हरण कर लिया है और नदी दुबली हो गई है? कौन हैं वे जिन्होंने नदी के कल-कल करते स्वच्छ जल में कलुष भरा जहर घोल दिया है कि मछलियाँ मर गई हैं। जबकि गंगा के गहरे जल में हाथी नहाते हैं, जल-क्रीड़ा करते हैं, बाघ उसे जूठा करता है, कछुए अपनी पीठों से उसे उलीचते हैं पर न तो गंगा गंदी हुई और न उसका पानी कम हुआ, बल्कि लगता तो ऐसा है कि हाथियों की जल-क्रीड़ा को गंगा आनन्दपूर्वक सहती थी-

"किसने तुम्हारा नीर हरा
कलकल में कलुष भरा
बाघों के जुठराने से तो कभी दूषित नहीं हुआ तुम्हारा जल

न कछुओं की दृढ़ पीठों से उलीचा जाकर भी कम हुआ
हाथियों की जल-क्रीड़ा को भी तुम सहती रहीं सानंद"

गंगा को विषैला करने वाले जलजीव नहीं हैं और दूसरे जीव भी नहीं हैं, उसे गंदा और विषैला करने वाला है मनुष्य, उसकी महत्त्वाकांक्षा के प्रतीक दीर्घकाय कारखाना जिसे अत्यधिक पानी की आवश्यकता होती है। ये कारखानें और कारखानों के मालिक सिर्फ अपना स्वार्थ देखते हैं। कारखानों से निष्काषित होने वाले रासायनिक पदार्थ को ज्ञानेन्द्रपति ने 'तेजाबी पेशाब' कहा है। इस 'तेजाबी पेशाब' ने शुभ्र गंगा को नीला कर दिया है। जिस तरह जहर चढ़ने सेव्यक्ति का शरीर नीला पड़ जाता है, उसी प्रकार गंगा की श्वेत जलधारा उद्योगों के विष से नीली पड़ गई है-

"आह ! लेकिन
स्वार्थी कारखानों को तेजाबी पेशाब झेलते
बैंगानी हो गई तुम्हारी शुभ्र त्वचा
हिमालय के होते भी तुम्हारे सिरहाने
हथेली – भरकी एक साबुन की टिकिया से
हार गई तुम युद्ध"

ज्ञानेन्द्रपति की दूसरी कविता है- 'नदी और साबुन'। कवि कहते हैं कि यह कैसी विडम्बना है कि जो साबुन कपड़ों के मैल को दूर करता है वही गंगा के जल को प्रदूषित करता है। यह साबुन की बट्टी साबुत है, इसका रैपर हटा दिया गया है। यह जल में डूबी घाट, की सीढ़ी से ऊपर सूखी सीढ़ी पर रखी है, रंग इसका नीला है। इस साबुन की बट्टी को एक बहुराष्ट्रीय कंपनी ने बनाया है, इसके लिए बहुत प्रचार भी किया है। कवि कहते हैं कि यह कैसी विचित्र माया है कि हथेली भर के साबुन की चौकोर काया की इतनी लंबी छाया है अर्थात् वह साबुन की टिकिया इतनी दूर तक अपना प्रभाव छोड़े हुए है-

ISBN-978-93-49938-50-2

"माया है कि तरहथ भर की उसकी चौकोर निश्चलकाया
की बहुत लंबी छाया है।"

गंगा के सिरहाने है हिमालय-शुभ्रता और उज्ज्वलता का प्रतिमान। उस शुभ्रता से निःसृत गंगा को एक हथेली भर की टिकिया ने नीला कर दिया। शुभ्रता धरी रह गई, विषैला नीलापन प्रमुख हो गया। इस साबुन का निर्माता भी मनुष्य है और साबुन से कपड़े धोने वाला भी, उद्योग लगाने वाला भी और उद्योगों का निस्सरण जल में छोड़ने वाला भी मनुष्य है, तो गंगा को प्रदूषित करने वाला भी मनुष्य ही हुआ। गंगा के प्रति कवि की यह चिंता प्रकारांतर से मनुष्य के लिए की गई चिंता है। अंततः गंगा का जल मनुष्य के लिए ही तो है। गंगा का जल केवल जीवों के प्यास को ही नहीं बुझाता, भीतर की गहरी 'संस्कारों की प्यास' को भी तृप्त करता है।

निष्कर्ष

इस कविता को प्रकाशित हुए पच्चीस वर्ष बीत चुके है, परंतु दुखत सत्य यह है कि जिस विषय को कवि ने उस समय उठाया था वह आज और भी गंभीर, व्यापक और भयावह रूप में हमारे सामने उपस्थित है। 'नदी और साबुन' कविता के माध्यम से कवि ज्ञानेंद्रपति जल प्रदूषण की समस्या को उद्घाटित करते हैं। नदी जीवन का प्रतीक है। नदी किनारे बड़े-बड़े शहर बसे हैं। लेकिन आज यांत्रिकीकरण, औद्योगीकरण, बढते शहरीकरण के कारण नदी का जल दिनों दिन प्रदूषित होता जा रहा है। अब जल प्रदूषण के कारण जल में रहने वाले जीव सुरक्षित नहीं रहे हैं। थल में रहने वाले जीव नदी के पानी से अपनी प्यास बुझा नहीं सकते हैं। भारतीय संस्कृति में नदी के पानी को तीर्थ प्रसाद मानकर प्राशन किया जाता रहा है। लेकिन आज नदी इतनी प्रदूषित हो रही है कि उसके जल को पीकर अच्छे खासे लोग बीमार होकर मृत्यु को प्राप्त हो रहे हैं। यह कविता नदियों को स्वच्छ एवं उसकी सीमाओं को सुरक्षित रखने का संदेश देती है।

संदर्भ

1) साहित्यप्रभा –साहित्यिक त्रैमासिक जनवरी, मार्च 2010
2) ज्ञानेंद्रपति, 'गंगातट' (काव्य संग्रह), प्रथम संस्करण 1999, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली
3) साहित्य सृजन संपादक हिंदी अद्यायन सा.फु.पु.विश्वविद्यालय पुणे प्रथम संस्करण 2024, नयी किताब प्रकाशन, दिल्ली
4) समकालीन हिंदी कविता में पर्यावरण चेतना प्रो. सुखदेव सिंह मिन्हास

ISBN-978-93-49938-50-2

'पुनरावृत्ति' मे अभिव्यक्त प्रकृति चित्रण

प्रा. मेघा बाबासाहेब तळपे

शोध छात्रा

हिंदी विभाग

न्यू आर्ट्स, कॉमर्स अँड सायन्स कॉलेज, अ.नगर [स्वायत्त]

संस्थागत संबंधता - सावित्रीबाई फुले पुणे विद्यापीठ,पुणे – २८

ईमेल आय डी –merubat1993@gmail.com

सारांश

वर्तमान समय मे अनेकविध माध्यमों के सहारे प्रकृति का चित्रण हुआ नजर आ रहा है। हिंदी साहित्य जगत में अनेक रचनाकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रकृति का चित्रण करते हुए पाठकों के सम्मुख रखने का प्रयास अत्यंत प्रभावी रूप से किया जा रहा है। हिंदी साहित्य के आधुनिक काल के अंतर्गत अनेक कवियों द्वारा अपने काव्य के अंतर्गत प्रकृति का अत्यंत सजीव चित्रण किया हुआ दृष्टीगोचर होता है। आधुनिक काल के महत्वपूर्ण रचनाकार के रूप मे अपना स्थान हिंदी साहित्य जगत मे निर्माण करनेवाले डॉ. हरिसिंह पाल जी है। उन्होंने काव्य संग्रह 'पुनरावृत्ति' में प्रकृति चित्रण अत्यंत सजीव एवं प्रभावी रूप से किया है। और प्रकृति चित्रण के साथ प्रकृति एवं मनुष्य जीवन के सबंध को प्रस्तुत किया है। यह चित्रण मनुष्य जीवन में प्रकृति की महत्ता को प्रतिपादित करता है। तथा मनुष्य जीवन को आसान बनाने में प्रकृति की उपयोगिता दर्शाता है।

मूल शब्द : प्रकृति, प्रकृति चित्रण, प्रकृति एवं मनुष्य संबंध, पुनरावृत्ति, डॉ. हरिसिंह पाल

परिचय

हिंदी साहित्य जगत में आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक अनेक रचनाओं के माध्यम से प्रकृति का चित्रण किया हुआ दृष्टीगोचर होता है। जो प्रकृति से रूबरू कराता है। प्रमुखता से प्रकृति चित्रण के अंतर्गत पहाड, घाटियाँ, नदियाँ, पेड – पौधे, जानवर, आकाश, मौसम आदि प्रकार के प्राकृतिक तत्त्वों का चित्रण देखने को मिलता

है। डॉ. हरिसिंह पाल जी द्वारा रचित 'पुनरावृत्ति' काव्य संग्रह के अंतर्गत प्रकृति चित्रण अत्यंत सुक्ष्म, सजीव एवं प्रभावी रूप से अभिव्यक्त किया है। जो प्रकृति का चित्र प्रस्तुत करने के साथ ही मानव एवं प्रकृति का गहरा संबंध दर्शाता है। तथा मानवीय भावनाओं एवं सामाजिक संदेशों को अभिव्यक्त करता हुआ नजर आता है। यह चित्रण अत्यंत सजीव एवं प्रभावी बन पडा है।

उद्देश्य –

- प्रकृति का चित्रण प्रस्तुत करना।
- 'पुनरावृत्ति' मे चित्रित प्रकृति चित्रण से रूबरू कराना।
- प्रकृति का महत्व प्रतिपादित करना।
- प्रकृति एवं मानव संबंध की अभिव्यक्ति प्रस्तुत करना।

पद्धति –

शोध निबंध के लिए मौलिक रचना एवं आधार ग्रंथों का सहयोग लिया गया। रचनाओं का पठन कार्य करके विश्लेषणात्मक पद्धति के आधार पर शोध निबंध का लेखन कार्य किया गया।

परिणाम एवं चर्चा –

हिंदी साहित्य जगत में आधुनिक काल के अंतर्गत अपना स्थान निर्माण करनेवाले डॉ. हरिसिंह पाल जी ने 'पुनरावृत्ति' काव्य संग्रह मे रचित कविताओं के माध्यम से प्रकृति का अत्यंत सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है। साथ ही प्रकृति को केंद्र स्थान मे रखकर मानव जीवन को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया गया है। पाल जी कहते है कि प्रकृति का नियम है नवनिर्माण करना। और उसके लिए पहले मिट जाना। अर्थात जब डाल से बिछडकर फूल गिर जाता है एवं अपने अस्तित्व को मिटाता है तब जाकर नये फुलों का निर्माण होता है। यह केवल प्रकृति का नियम नही है। बल्की इसके माध्यम से प्रकृति मानव जीवन की यथार्थ स्थिती अप्रत्यक्ष रूप सेअभिव्यक्त करते हुए बताना चाहती है कि एक दिन हम सबको उस फुल के समान अपने अस्तित्व को मिटता हुआ देखना होगा। क्योंकी तभी जाकर मानव सृष्टी का नवनिर्माण एवं विकास संभव है।

ISBN-978-93-49938-50-2

अर्थात पाल जी ने प्रकृति का सजीव चित्रण करने के साथ ही मानव जीवन से प्रकृति का संबंध प्रतिपादित करते हुए नवसृजन से रूबरू कराने का प्रयास किया हुआ दृष्टीगोचर होता है। कवि के अनुसार जिस प्रकार मनुष्य मे अपने अस्तित्व निर्माण करने की तमन्ना होती है तथा उसमे दिनोंदिन बदलाव एवं परिवर्तन लाने की चाह होती है। बिल्कुल उसी प्रकार प्रकृति को भी नवसृजन की प्यास होती है। प्रकृति का नवनिर्माण ही प्रकृति सौंदर्य से परिचित कराता है। बसंत का मौसम इस बात का उत्तम उदाहरण हो सकता है। कवि कहते है कि बसंत का मौसम जब आता है तब अपना ही गाँव इस प्रकार दिखाई देता है जैसे मानो सपने मे उसकी छवि अंकित की हो। इस सुनहरे मौसम में अपने – पराये का भेद आसानी से मिट सकता है। क्योंकी प्रकृति की सुंदरता सिर्फ प्रकृति को ही सुंदर नही बनाती बल्की मनुष्य जीवन को भी प्रभावित करती है। जिस प्रकार मनुष्य जीवन में दुख के बाद सुख का आना होता है एवं महत्व रखता है। बिल्कुल उसी प्रकार प्रकृति मे पतझड की कसौटी पार करने के बाद बसंत का आना तय होता है एवं महत्व रखता है। प्रकृति अपने माध्यम से मनुष्य को संदेश देती है कि बसंत के लिए पतझड को धिक्कारना नही होता बिल्कुल उसी प्रकार सुख पाने के लिए दुख से हारना नही होता। कवि पाल जी ने अपनी कविताओं के माध्यम से प्रकृति की सुंदरता के साथ मानव जीवन एवं प्रकृति संबंध को उजागर करते हुए प्रकृति चित्रण अत्यंत प्रभावी रूप से प्रस्तुत किया है। डॉ. पाल द्वारा प्रयुक्त काव्य पंक्तियों के माध्यम से प्रकृति का सजीव चित्रण देखने का प्रयास कर सकते हैं। पाल जी प्रकृति का चित्रण करते हुए कहते हैं कि प्रकृति निरंतर - बिना थके अपना कार्य करती रहती है। उदाहरण स्वरूप यदि सूरज का जीवन चक्र देखे तो प्रतीत होता है कि सूरज हर दिन उगता है तथा नई शुरुआत का संदेश देता है। सूरज का उगना, घटना, बढ़ना, छुपना आदि प्रकृति के नियमों को उजागर करता है। तथा इसके माध्यम से मनुष्य जीवन की यथार्थ स्थिति को सम्मुख रखता है। रचनाकार कहना चाहते हैं कि मनुष्य जीवन में भी इस प्रकार के उतार - चढ़ाव आते रहते हैं। कभी जीवन में किसी चीज की वृद्धी होती दिखाई देती है तो कभी कमी नजर आती है । लेकिन प्रकृति के समान ही मनुष्य जीवन निरंतर चलता रहता है। समय के साथ सभी में बदलाव आना

तय है फिर चाहे प्रकृति हो या मनुष्य जीवन। इस बात को स्पष्ट करते हुए पाल जी कहते हैं कि,

'सवेरे का सूरज क्या कह रहा है,
जाते हुए पल बढ़ाए जा रहा है।
यह उगना और छिपना,
बढ़ना और घटना, निरंतर रहा है।'[१]

प्रकृति का नवनिर्माण मनुष्य के साथ सभी प्राणी जगत के मन को भाता है। लेकिन नए फूल - फल आदि का निर्माण होने से पहले पेड़ पर लगे फल एवं फूलों को पेड़ से अलग होना पड़ता है। प्रकृति का नियम दर्शाता है कि मनुष्य जीवन हो या प्रकृति हर किसी को अपने जीवन डाल से अलग होना ही पड़ता है। तब जाकर कहीं नवनिर्माण होना संभव हो पाता है । इस बात को स्पष्ट करते हुए पाल जी कहते हैं कि,

'ये जो फूल झड़ रहे हैं,
अपनी डाल से ।
झड़ना ही इनकी नियति है,
अपनी डाल से बिछुड़ना ही,
प्रकृति है इनकी ।'[२]

प्रकृति से प्रेम करनेवाले तथा प्रकृति के विभिन्न ऋतुओं की राह देखनेवाले को प्रकृति प्रेमी कहा जाता है। प्रकृति में अनेकविध प्रकार के ऋतु पाएँ जाते हैं। जिनमें से एक है बसंत। बसंत ऋतु में प्रमुखता से पेड़ों पर नई पत्तियाँ आती है तथा फूल खिलते हुए नजर आते हैं। चारों ओर हरियाली छा जाती है। उस समय प्रकृति का अलग ही सौंदर्य दृष्टिगोचर होता है। जो मन को भाँता है। प्रकृति में फैली हरियाली का सुंदर चित्रण करते हुए मनुष्य मन के भावों को उजागर करने का प्रयास अत्यंत सजीव रूप से पाल जी ने किया हुआ है। कवि कहते हैं कि,

'सावन के अंधे को,
हरा - ही हरा नजर आए ।

ISBN-978-93-49938-50-2

बसंत की बहार में
सावन की फुहार में ।'[३]

प्रकृति हो या मनुष्य जीवन हो दोनों में भी बसंत - पतझड़ तथा सुख – दुख देखने को अवश्य मिलते है। प्रकृति कभी पतझड़ के आने से दुखी नहीं होती। पतझड़ को स्वीकार कर लेती है। क्योंकि उसे पता है नियम के अनुसार एवं समय के साथ पतझड़ के बाद अवश्य बसंत आएगा। और फिर से प्रकृति सौंदर्य खिल उठेगा। बसंत का यौवन देखना है तो पतझड़ का होना आवश्यक है। प्रकृति अपने माध्यम से बताना चाहती है कि मनुष्य जीवन में भी दुख का आना आवश्यक है। क्योंकि दुख आएगा तभी तो आनेवाले सुख की कीमत समझ आएगी। इसीलिए दुख को नकारकर जीवन में हारना नहीं चाहिए। बल्कि हिम्मत से काम लेकर आनेवाले सुख का इंतजार करना चाहिए। क्योंकि समय कभी एक जैसा नहीं रहता। उसमें निरंतर परिवर्तन होता रहता है। इसीलिए पाल जी कहते हैं कि,

"पतझड़ को धिक्कारे नहीं,
उसका स्वागत करें ।
तभी हँसता खिलखिलाता,
बसंत आ पाएगा ।"[४]

इस प्रकार से कहा जा सकता है कि कवि डॉ. पाल जी ने अपने काव्य के माध्यम से प्रकृति चित्रण की अभिव्यक्ति अत्यंत सजीव एवं प्रभावी रूप से की हैं। प्रकृति प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से मनुष्य जीवन का यथार्थ सम्मुख रखती हैं। जिसका चित्रण कवि द्वारा किया गया है जो अत्यंत प्रभावी बन पड़ा है।

निष्कर्ष –

प्रस्तुत शोध निबंध के माध्यम से काव्य मे अभिव्यक्त प्रकृति चित्रण को सम्मुख रखने का प्रयास किया है। आधुनिक काल के रचनाकार डॉ. हरिसिंह पाल द्वारा रचित कविताओं से रूबरू कराने का प्रयास किया गया है। 'मुक्त छंद मे रचित कविताओं के माध्यम से मानव जीवन से संबंधित प्रकृति का अंकन किया गया है।

संदर्भ –

१. पुनरावृत्ति, डॉ. हरिसिंह पाल, पृष्ठ क्रमांक १३

२.पुनरावृत्ति, डॉ. हरिसिंह पाल, पृष्ठ क्रमांक १९

३ .पुनरावृत्ति, डॉ. हरिसिंह पाल, पृष्ठ क्रमांक ७८

४. पुनरावृत्ति, डॉ. हरिसिंह पाल, पृष्ठ क्रमांक ८०

ISBN-978-93-49938-50-2

आधुनिक हिंदी कविता में पर्यावरण चेतना

प्रा. सावित्री सूर्यकांत मांढरे

सहाय्यक अध्यापिका

औद्योगिक शिक्षण मंडल पिंपरी पुणे १८

ईमेल- savitri.mandhare@gmail.com

प्रस्तावना

प्राचीन साहित्य में प्राकृतिक शक्तियों को वन्दनीय माना गया हैं। क्योंकि पृथ्वी तथा प्राकृतिक शक्तियों के बिच संतुलन पर ही मानव का अस्तित्व निर्भर हैं। यही कारण हैं कि हमारे प्राचीन ऋषियों ने धरती तथा उसके प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में सन्देश दिया। प्राचीन भारत में प्रकृति की पूजा को महत्व दिया गया हैं। अग्नि, वायु, धरती, जल सभी को देवता माना गया हैं। परन्तु आधुनिक युग के भौतिक विकास ने मानव और प्रकृति को एक दुसरे का सहयोगी या पूरक नहीं रहने दिया। जीवधारियों का अस्तित्व पर्यावरण पर ही आधारित हैं। पर्यावरण सजीव और निर्जीव घटकों का एक जटिल तंत्र हैं। पर्यावरण का प्रभाव व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक विकास को प्रभावित करता हैं। फिर भला साहित्य कैसे नहीं प्रभावित होता। साहित्यकार तो हमेशा प्रकृति प्रेमी रहे हैं। परन्तु मनुष्य आज अपने निजी स्वार्थ के चलते प्रकृति को नष्ट करते जा रहा हैं। जिसके परिणाम स्वरुप पर्यावरण प्रदुषण आज ज्वलंत समस्या बन गयी हैं। प्रकृति के संरक्षण एवं पर्यावरण के प्रति साहित्य हमेशा साधक रहा हैं। हिंदी साहित्य में पर्यावरण विनाश से निर्माण हुई भयावहता, वृक्ष संवर्धन तथा उनका महत्व इसपर कई कवियों ने अपना काव्य लिखा हैं और जनता को पर्यावरण प्रदुषण के दूरगामी प्रभावों के प्रति सोचने के लिए बाध्य किया हैं।

मूल शब्द : पर्यावरण, प्रकृति, प्रदुषण, समकालीन, छायावाद

उद्देश्य

साहित्य के माध्यम से पर्यावरण के महत्व को समझना और पर्यावरण प्रदुषण के

कारण उत्पन्न परिणामों से संपूर्ण मानव जाति को सचेत करना इस आलेख का उद्देश्य हैं।

विषय प्रवेश

प्रकृति और मनुष्य का घनिष्ठ संबंध हैं। मनुष्य जितना व्यक्ति और समाज से सीखता हैं उससे कई अधिक वह प्रकृति से सीखता हैं। इसलिए प्रकृति को गुरु के रूप में माना जाता हैं। हमारे प्राचीन धार्मिक ग्रन्थ, ऋषिमुनीयों ने प्रकृति के महत्व को समझा इसलिए उन्होंने श्लोक ऋचाओ में प्रकृति का भरपूर वर्णन किया। उसे इश्वर स्वरुप समझा। हमें जो भी मिलता हैं वह प्रकृति की देन हैं। यहाँ तक कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी की प्रकृति के बिना हम जीवित ही नहीं रह सकते। प्रकृति और मनुष्य एक दुसरे के पूरक हैं। प्रकृति के बिना मनुष्य का कोई अस्तित्व ही नहीं हैं। प्रकृति सबके साथ एक जैसा व्यवहार करती हैं। किसी को कम, किसी को ज्यादा नहीं देती। प्रकृति के द्वार सबके लिए समान रूप से खुले हैं। मगर हम प्रकृति के साथ खिलवाड़ करने लगे हैं। तब प्रकृति ने भी अपना रौद्र रूप दिखाना शुरू किया। परिणाम यह हुआ की प्रकृति के साथ साथ मनुष्य की भी हानि होने लगी। जब तक हम प्रकृति के साथ होते हैं हमारा विकास, उन्नति होती रहती हैं। जिस दिन हम प्रकृति से अलग होंगे हमारा विनाश निश्चित हैं।

समस्त विश्व की सजीव सृष्टि प्रकृति की गोद में पलती हैं। अर्थात संपूर्ण सजीव सृष्टि का मूल प्रकृति में निहित हैं। इसलिए आदिकाल से लेकर आज तक अनेक साहित्य कारो ने प्रकृति की महत्ता को समझा और अपनी रचनाओं में प्रकृति के महत्व कोबढ़ावा दिया। अपनी रचनाओं का विषय बनाया आदिकाल में विद्यापति, भक्तिकाल में तुलसी, जायसी, रीतिकाल में बिहारी, पद्माकर, सेनापति, तो आधुनिक काल में प्रसाद, पन्त, निराला, महादेवी वर्मा के काव्य में हमें प्रकृति चित्रण दिखाई देता हैं।

आधुनिक काल में प्रकृति चित्रण पर व्यापक ध्यान दिया गया भारतेंदु काल में। इस काल के महत्वपूर्ण कवि श्रीधर पाठक ने कश्मीर और हिमालय के प्रकृति सौंदर्य पर विस्तृत कविताएँ लिखी। भारतेंदु जी ने भी अपना सर्वाधिक काव्य प्रकृति सौंदर्य पर ही लिखा। गंगा - यमुना से संबंधित उनकी कई कविताए हमें उनके साहित्य में मिलती हैं।

ISBN-978-93-49938-50-2

द्विवेदी युग में पं. अयोध्या सिंह उपाध्याय हरि औंध तथा ठाकुर गोपाल शरण सिंह ने प्रकृति चित्रण की और सबसे अधिक ध्यान दिया। हरिऔंध जी ने 'प्रियप्रवास' और 'वैदेही वनवास' नामक महाकाव्य लिखे। इन महाकाव्यों में उन्होंने प्रकृति का व्यापक चित्रण किया हैं। ठाकुर गोपाल शरण सिंह ने अपनी 'कादंबिनी' और 'मानसी' आदि रचनाओं में प्रकृति के मधुप, कोकिल, चांदनी, प्रभात आदि विविध अंगों पर मुक्तक कविताएँ लिखी हैं।

छायावादी कवियों ने प्रकृति का आलंबन और उद्दीपन रूप में चित्रण किया। छायावादी कवियों ने पर्यावरण के रूप में एक ओर प्रकृति के कोमल मधुर चित्र अंकित किए हैं। तो दूसरी ओर भीषण और प्रलय कारी वातावरण का चित्रण भी किया हैं। कवि पन्त ने बादलों की भयानकता का चित्रण करते हुए प्रकृति का प्रकोप कैसे होता हैं इसका चित्रण किया हैं। कवि सुमित्रानंदन पन्त को प्रकृति का सुकुमार कवि कहा जाता हैं। इन्होनेतो प्रकृति चित्रण के सामने नारी चित्रण का भी तिरस्कार किया हैं।

"छोड द्रुमों की मृदु छाया , तोड़ प्रकृति से भी माया
बाले तेरे बाल जाल में , कैसे उलझा दु लोचना"

जयशंकर प्रसाद अपनी रचना 'कामायनी' में प्रारंभ से ही प्रकृति के भयानक रूप का चित्रण करते रहे हैं । इस काव्य में जल प्रलय के बाद सबकुछ नष्ट हो जाता हैं। कवि ने इस कविता के माध्यम से पाठकों को यह संकेत दिया हैं की प्रकृति से खिलवाड़ नहीं करना चाहिए । वह कहते हैं –

"हिमगिरी के उत्तुंग शिखर पर बैठ शीला की ऊपर छाँह।
एक पुरुष , भीगे नयनों से देख रहा है प्रलय प्रवाह"

यह पृथ्वी हमारी माता हैं। हम अपने निजी स्वार्थ के लिए इस प्रकृति को नुकसान पहुंचा रहे हैं। लेकिन इसका छोटासा उद्रेक भी पुरे संसार को नाश्ता कर सकता हैं। कामायनी के 'आशा सर्ग' में प्रसाद जी लिखते हैं -

"करका क्रंदन करती, गिरती और कुचलना था सबका
पंचभूत का यह तांडवमय, नृत्य हो रहा था कबका"

अज्ञेय जी के काव्य में मानव और पर्यावरण के बिच अंत:संबंध दिखाई देता हैं। उन्होंने अपनी कविता 'असाध्यविणा'में मनुष्य को अनुभूति प्राप्त करने की प्रेरणा दी। मनुष्य के भोगवादी प्रकृति के कारण आज प्रकृति खतरे में हैं इसलिए हमें प्राकृतिक आपदाओं का निरंतर सामना करना पड़ता हैं। प्रतिवर्ष कही न कही प्राकृतिक विनाश की घटनाएं देखने मिलाती हैं। अज्ञेय अपनी रचना में मानव को सचेत करते हुए लिखते हैं।

"सिर पर सम्मुख जलता सूरज भभक रहा हैं
लपटों में घिर देह बचाती पृथ्वी का हरियाला आँचल झुलस गया हैं।
न जाने क्यों नाराज हुए इन्द्रदेव"

१९६० के बाद समकालीन परिवेश की हर एक इकाई, प्रवृति आदि ने कविता में स्थान पाया। समकालीन कविता की विशेषता यह रही की उसमे पर्यावरण के प्रति चिंता भाव व्यक्त होने लगा। उसके पहले भी कविता में प्रकृति थी लेकिन वह चिंता भाव कम दिखाई देता है जितना समकालीन कवियों में दिखता हैं। उन्होंने मानव मन के विविध भावों को प्रकृति के माध्यम से अभिव्यक्त किया। उस समय के सभी कवि और कवयित्रियों ने प्रकृति को अपने काव्य में महत्वपूर्ण स्थान दिया था परन्तु समकालीन कविता इसलिए अलग हैं क्योंकी समकालीन कवियों ने पर्यावरण के प्रति सजग भाव जताने की संपूर्ण कोशिश की। इस काल के अनेक कवियों ने इसी भाव को अपनाया। समकालीन कविता के पहली पीढ़ी के कवि नागार्जुन, मुक्तिबोध, केदारनाथ अगरवाल, केदारनाथ सिंह, त्रिलोचन, रघुवीर सहाय, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना से लेकर अनेक युवा कवि – कवयित्रिया भी पर्यावरण के प्रति अत्यंत सजग नजर आते हैं। आज की कविता में यह भाव अधिक चिंता और तीव्रता से व्यक्त होने लगा है।

समकालीन कवि राज तेलंग ने अपनी शीर्षक 'एक पेड़' में स्पष्ट किया हैं कि पेड़ और पक्षियों की एक दुसरे पर निर्भरता प्राकृतिक पारिस्थितिक तंत्र के लिए कितना आवश्यक हैं। मनुष्य को इसे बनाए रखने के लिए उपाय करने चाहिए।

"एक पौधा लगाना
कई परिंदों के लिए

ISBN-978-93-49938-50-2

बसेरे का इंतजाम करना हैं
एक पत्ते को पुचकारने से पुरे पेड़ को हौसला मिलता हैं।"

हरे भरे जंगल जलने से परिस्थिति का संकट उत्पन्न हो रहा हैं। जंगल की इस आग से हर बुद्धिजीवी का चिंतित होना आवश्यक हैं। कुंवर नारायण सिंह अपनी कविता में यह चिंता व्यक्त करते हैं।

'एक हरा जंगल धमनियों में जलता हैं
तुम्हारे आँचल में आग ....
चाहता हूँ झपटकर अलग कर दूँ तुम्हे
उन तमाम सन्दर्भों से जिनमे तुम बेचैन हो
और राख हो जाने से पहले ही उस सारे दृश्य को बचाकर की
किसी दूसरी दुनिया के अपने अविष्कार में शामिल कर लूँ।"

पर्यावरण की परिस्थितिकी के संतुलन को बनाए रखने के लिए मनुष्य और अन्य जीवों का आपसी संबंध जरुरी हैं। कौआ एक साधारण पक्षी हैं लेकिन मनुष्य और प्रकृति का साहचर्य इस पक्षी के द्वारा विजय देव नारायण साही अपनी कविता 'कौए' में स्पष्ट किया हैं। प्रकृति की परिस्थितिकी बदल रही हैं। इसके कारण हो सकता हैं कि पिने का पानी, खाने को अन्न,पहनने को वस्त्र तक उपलब्ध होने में दिक्कते हो सकती हैं। प्राकृतिक संतुलन को बनाए रखने के लिए हमें उपाय करने चाहिए। यह चिंता चंद्रकांत सालवे की कविता में दृष्टि गोचर होती हैं।

"बस इतना अन्न बचा देना
कि वह अपने परिवार का
पेट भर सके
बस इतना कपास बचा देना कि
वह अपने बदन पर कपड़ा लपेट सके
बस इतनी जमीं बचा देना
कि वह अपनी कथरी बिछा सके"

वायु प्रदुषण के कारण ताज़ी हवा भी उपलब्ध नहीं हो पा रही हैं। प्राद्यौगिकी के कारण हवा प्रदूषित हो रही हैं। समकालीन कवि हेमंत कुकरेती की कविता 'हवा' पर्यावरण विनाश के विषय में चिंता व्यक्त करती हैं।

"ये कैसा समय हैं ?
पेड़ ,पत्ती, फुल, हवा
केवल कविता में बचे हैं
और कुछ खूंखार बूढों को
बेहतर अखर रहे हैं।"

औद्योगिक प्रदुषण, पेट्रोलियम, पदार्थों के जलने से वातावरण की हवा प्रदूषित हो रही हैं। उसमे ऑक्सिजन की मात्रा लगातार कम हो रही हैं। उसमे नायट्रोजन, कार्बन, और सल्फर की मात्रा बढ़ रही हैं। वातावरण की इस प्रदूषित हवा की स्थिति पर कवि मंगलेश डबराल का वैज्ञानिक चिंतन इस प्रकार व्यक्त होता हैं।

"बढ़ रहे नायट्रोजन, सल्फर, कार्बन के ऑक्साइड
और हवा में झुलते हुए चमकदार और खतरनाक कण
बढ़ रही हैं घना, दमन, प्रतिशोध और कुछ क़िस्म की खुशिया
चारो और गर्मी स्प्रे की बोतलें और खुशबूदार कुहारे बढ़ रही हैं"।

पेड़ पौधे हमारे जीवन का प्रमुख अंग होते हैं। और पेड़ों को काटने से उतना ही दुःख होता हैं जितना अपनों से बिछुड़ने का। जंगलों का महत्व, वनों की रक्षा, सुरक्षा और जंगलों के कटने से मानव जाति पर होनेवाले प्रभाव को बहुत ही अच्छे से कवि कुंवरनारायण सिंह अपनी कविता वृक्ष की हत्या में स्पष्ट करते हैं।

"अब की घर लौटा तो देखा वह नहीं था।
वही बुढा चौकीदार वृक्ष
जो हमेशा मिलता था घर के दरवाजे पर तैनात
धुप में बारिश में
गर्मी में सर्दी में

ISBN-978-93-49938-50-2

हमेशा चौकन्ना
अपनी खाकी वर्दीमें”

प्रकृति मनुष्य जीवन का स्पंदन हैं। वह मनुष्य का पोषक तत्व हैं। वह हमेशा हौसला बढ़ाती हैं। वृक्ष हमें समाज के प्रति दायित्व और प्रतिबद्धता का निर्वाह करना सिखाते हैं। आंधी तूफानों का सामना करते हुए एक जगह खड़े होकर हालात से लड़ता रहता हैं। वह भेडिया, बाघ या शेर की दहाड़ से नहीं डरता। वह मनुष्य को कितने भी आंधी तूफान आये निडर होकर उससे सामना करने की प्रेरणा देता हैं। पेड़ एक दाता के रूप में भी मनुष्य जीवन में बहुत उपयोगी हैं। उसका जड़, तना, शाखा, पत्ती, पुष्प फल और बिज उसकी हर एक चीज हमारे काम आती हैं। हमारी साँसों के लिए वह शुद्ध हवा देता हैं। हमारी बिमारी के लिए कई दवाए प्रकृति से हमें मिलती हैं। उसके सुन्दर फुल हमारे सुख दुःख के प्रसंगों में काम आते हैं। मनुष्य जीवन में पेड़ के विभिन्न भूमिकाओं को स्पष्ट करते हुए उसकी आवश्यकता की और संकेत करते हैं कवि डॉ. मुकेश गौतम अपनी कविता ‘पेड़ होने का अर्थ’ में। सब कुछ दूसरों को देकर पेड़ अपने जीवन की सार्थकता सिद्ध करता हैं।

“जड़ , तना ,शाखा,पत्ती, पुष्प, फल और बिज
हमारे लिए ही तो है पेड़ की हर एक चीज
किसी ने उसे पूजा
किसी ने उस पर कुल्हाड़ी चलाई
पर कोई बताए
क्या पेड़ ने एक बूंद भी आंसू गिराई?
हमारी साँसों के लिए शुद्ध हवा
बिमारी के लिए दवा
शव यात्रा, शगुनया बारात
सभी के लिए देता हैं पुष्पों की सौगात”

प्रकृति आदिवासी जीवन का आधार हैं। आदिवासी जीवन पूरी तरह से प्रकृति के

ऊपर निर्भर होता हैं। उनकी रोजी रोटी, उनका वास्तव्य जंगलों के ऊपर ही निर्भर हैं। जंगलों के बिना वह बेघर हो जाते हैं। जंगल कटाई की वजह से उन्हें कई समस्याओं का सामना करना पड़ता हैं, उनकी वेदनाओं को आदिवासी कवियों ने अपने काव्य का विषय बनाया। उनके जीवन का यथार्थ उनके काव्य में झलकता हैं। समकालीन कवियों ने जिस प्रकार अपने काव्य के माध्यम से पर्यावरणीय संवेदना स्पष्ट कि हैं उसी प्रकार आदिवासी हिंदी रचनाकारों ने भी पर्यावरण केप्रति गहरा लगाव व्यक्त किया हैं। उनका प्रकृति प्रेम उनकी कविताओं स्पष्ट रूप से झलकता हैं। निर्मला पुतुल अपनी कविता में उस प्रकृति प्रेम को व्यक्त करती नजर आती हैं।

"क्या तुमने कभी सुना हैं
सपनों में चमकते कुल्हाडियों के भय से
पेड़ों की चीत्कार ?
सूना हैं कभी
रात के सन्नाटे में अंधरे से मुंह ढाप
किस कदर रोटी हैं नदिया"

अदिवासी कवि हरिराम मीणा पर्यावरण को नष्ट करनेवाले सभ्य समाज को चेतावनी देते हैं और आदिवासियों को सचेत करते नजर आते हैं।

"देखो तुम्हारे पेड़ गिर रहे हैं
समुद्र मिला हो रहा हैं
तटों पर प्लास्टिक की थैलिया बिखर रही हैं।
मछलिया दूर चली गयी हैं।
ऑक्टोपस छुप गए
और तुम चुप हो ?"

निष्कर्ष

आदिकाल से लेकर प्रकृति तथा पर्यावरण का समावेश साहित्य में होता आया हैं। आदि काल में प्रकृति का आधार लेकर वीर काव्य का चित्रण किया तो भक्तिकाल के

ISBN-978-93-49938-50-2

कवियों ने इश्वर भक्ति का तालमेल प्रकृति के साथ किया। रीतिकाल के कवियों ने प्रकृति की सुन्दरता का अलंकारिक वर्णन किया। बिहारी, देव, सेनापति इन कवियों ने प्रकृतियों का सौन्दर्यात्मक वर्णन किया। और छायावादी कवियों ने प्रकृति में मानवीय संवेदनाओं को महसूस किया। इसका अर्थ यह हुआ की हिंदी साहित्य के कवि प्राचीन काल से प्रकृति चित्रण करते आये हैं। आधुनिक काल के कवियों ने विशेषकर समकालीन कवियों ने प्रकृति के बिना मनुष्य तथा संजीव सृष्टि का अस्तित्व ही नहीं माना। और यही सत्य हैं की पेड़ पौधों के बिना हमें ना ऑक्सिजन मिल सकती हैं ना ही अन्न मिल सकता हैं। यहाँ तक की हमारे वस्त्र भी प्रकृति से ही प्राप्त होते हैं। ऐसे में आज की स्थिति ऐसी हैं की औद्योगिकीकरण और शहरीकरण के कारण जंगल कांटे जा रहे। इस वजह से ऑक्सिजन का निर्माण कम हो रहा हैं। पेड़ काटने के वजह से बारिश नहीं हो रही हैं। खेत में फसल नहीं उग रही हैं। या तो फिर बहुत ज्यादा बारिश की वजह से फसल खराब हो रही हैं।

मनुष्य की सुविधाओं के लिए किए जानेवाले अनुसंधानों और उत्पादित किए गए साधनों के कारण पर्यावरण का ऱ्हास हो रहा हैं। वाहनों के बढ़ोतरी के कारण कार्बण डायऑक्साइड की मात्रा बढ़ रही हैं और ऑक्सिजन की मात्रा कम हो रही हैं। हमें शुद्ध हवा का मिलना मुश्किल हो रहा हैं। वर्त्तमान समय में और एक संकट का सामना मनुष्य को करना पड रहा हैं और वह यह हैं ओझोन की परत में छेद होना अथवा परत को क्षति पहुँचाना। यह मनुष्य की स्वार्थी प्रवृत्ति का ही परिणाम हैं। इस कारण ग्लोबलायजेशन की समस्या निर्माण हो रही हैं। इसी का परिणाम यह होता हैं बेमौसम बारिश होना या अकाल पड़ना।

पर्यावरण प्रदुषण जागतिक स्तर पर एक ज्वलंत समस्या बन गयी हैं। इससे पर्यावरण का हर एक तत्व बाधित हो रहा हैं। समकालीन कवियों ने इस ज्वलंत समस्या को अपने काव्य का विषय बनाया। अपने काव्य के माध्यम से लोगों को इस बात से अवगत कराया की वृक्ष हमारे जीवन में कितने उपयोगी हैं। उनके बिना हमारा जीवन तथा हमारे अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती।

सन्दर्भ:

१. डॉ . बाणदार सलीम, 'हिंदी कविताओं में पर्यावरण विमर्श', शोध आलेख बोहल शोध मञ्जूषा, ISSN २३९५ – ७११५
२. जाधव पोपट यशवंत ,'हिंदी कविता में पर्यावरण चेतना', शोधालेख इंटरनेशनल जर्नल ऑफ़ एडवांस एंड अप्लाइड रिसर्च २३ मार्च २०२४
३. सारस्वत ललितकुमार, 'समकालीन हिंदी कविता में पर्यावरण विमर्श', शोधग्रंथ – चौधरी चरणसिंह विश्वविद्यालय मेरठ
४. पटेल ज्योति, 'समकालीन साहित्य में पर्यावरण अनुशीलन' शोधालेख – जुनिख्यात ISSN २२७८ -४६३२ vol १० इशू १ दिसंबर २०२०
५. शिंदे सूर्यकांत, 'पर्यावरणीय संवेदना और हिंदी साहित्य', शोध आलेख – सेतु ISSN २४७५-१३५९
६. डॉ. चौधरी विनयकुमार एस, 'हिंदी काव्य में पर्यावरण संरक्षण', शोध आलेख – जर्नल -रिव्यु ऑफ़ रिसर्च वोलुम ७, इशू ५ ISSN २२४९-८९४X

ISBN-978-93-49938-50-2

वर्तमान हिंदी कविता में पर्यावरण चेतना

प्रा.बालाजी सूर्यवंशी

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग

शिवाजी महाविद्यालय उदगीर, जिला- लातूर

ईमेल- bps.smu@gmail.com

सारांश

वर्तमान हिंदी कविता में विभिन्न विमर्शों के साथ पर्यावरण विमर्श अर्थात् पर्यावरण चेतना भी प्रमुखता के साथ दिखाई देती है। वर्तमानकालीन हिंदी कवि पर्यावरण समस्या के प्रति अत्यंत सजग दिखाई देता है। जो पर्यावरण मनुष्य जीवन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होता है, उसमें आज मनुष्य के स्वार्थ के कारण असंतुलन दिखाई दे रहा है। प्रकृति का प्रत्येक तत्व आज असंतुलित है जिससे अनेक प्रकार के प्रदूषणों का सामना करना पड़ रहा है। प्राकृतिक संकट मनुष्य एवं उसकी मनुष्यता के सामने प्रश्नचिह्न बनकर खड़ा है। इस संकट को, इस जटिल प्रश्न को आज का कवि अपनी कविता के माध्यम से समाज के सामने अत्यंत सशक्त रूप में रखने का कार्य कर रहा है। वर्तमान कविता में प्रकृति को आलंबन एवं उद्दीपत रूप के साथ-साथ चेतना के रूप में भी अभिव्यक्ति मिली है। यह प्राकृतिक चेतना पर्यावरण वाद या पर्यावरण विमर्श के रूप में एक सजग आंदोलन का रूप ले रही है। इस पर्यावरण चेतना के अंतर्गत प्राकृतिक चेतना के साथ-साथ सांस्कृतिक एवं सामाजिक पर्यावरण के प्रति भी वर्तमान कवि अत्यंत सजग एवं सचेत दिखाई देता है।

मूल शब्द : प्रकृति, पर्यावरण, प्राकृतिक कारक, प्राकृतिक प्रदूषण, सांस्कृतिक एवं सामाजिक प्रदूषण, आधुनिकीकरण, औद्योगिकीकरण, नागरीकरण, जल प्रदूषण

परिचय

21 वीं शताब्दी का उदय ही पर्यावरण की चिंता के साथ हुआ। मनुष्य ने अपने ऐशो-आराम के लिए पर्यावरण का काफी हद तक नुकसान किया है। आधुनिक मशीन

सभ्यता ने पर्यावरण को तहस-नहस कर दिया है। मनुष्य की स्वार्थ परकता कहीं पर भी रूकने के लिए तैयार नहीं है। उल्टा वह दिन-ब-दिन बढ़ती जा रही है। स्वार्थ में अंधा मनुष्य दसो दिशाओं से अपने हजारों हाथों से प्रकृति को लूटने का काम कर रहा है। बढ़ती जनसंख्या, नागरीकरण, औद्योगिकीकरण का महाजाल, विभिन्न रसायनों का अतिप्रयोग, आधुनिकीकरण के नाम पर विभिन्न प्रकार के यंत्रों की भरमार आदि के कारण प्राकृतिक असंतुलन और उसके चलते विभिन्न प्रकार के प्रदूषण तथा बिमारियों का सामना करते हुए भी आज का मनुष्य इन बातों पर विचार करने के लिए तैयार नहीं है। जो आवरण मनुष्य मात्र के लिए अत्यंत आवश्यक है, उसे ही वह तहस-नहस करने पर तुला है। मनुष्य की यह कृति उस मनुष्य की तरह है, जो उसी टहनी को तोड़ रहा है जिस पर वह बैठा या टिका है।

प्राकृतिक प्रदूषण, पर्यावरण चेतना एवं पर्यावरणवाद :

मनुष्य और पर्यावरण का अटूट संबंध है। पर्यावरण मनुष्य का जीवन स्रोत है। पर्यावरण से उर्जा लेकर ही और पर्यावरण में घुल-मिलकर ही मनुष्य अपना जीवन यापन करता है। बिना पर्यावरण के मनुष्य जीवन या जीव चेतना असंभव है। ज्ञात रूप में पृथ्वी एक मात्र ऐसा ग्रह है जिस पर जीत के लिए आवश्यक पर्यावरण है, जिसे प्रकृति की संज्ञा भी दी जाती है। इसी प्रकृति के गोद में मनुष्य जीवन फलता-फूलता है। दूसरी ओर मनुष्य स्वयं भी इसी प्रकृति या पर्यावरण का एक अंग है, घटक है।

पर्यावरण शब्द दो शब्दों से बना है- 'परि' और 'आवरण'। इसमें 'परि' का अर्थ है 'चारों ओर' तथा 'आवरण' शब्द से तात्पर्य है 'ढका हुआ या घेरा'। इसका मतलब है मनुष्य के ईर्द-गिर्द जिन तत्वों का घेरा है उसे पर्यावरण कहा जाता है। पर्यावरण शब्द अंग्रेजी के 'Environment' शब्द का पर्यायवाची है। 'Environment' शब्द का अर्थ है 'आस-पास का वातावरण'। अत: जिस वातावरण में मनुष्य जीता है या मनुष्य के आस-पास जो वातावरण है, उसे पर्यावरण कहा जाता है। हम जो देखते है या महसूस करते है वह पर्यावरण है। "प्राकृतिक या सांस्कृतिक तत्त्व जो हमें चारों तरफ से घेरे रहते हैं और

ISBN-978-93-49938-50-2

हमारे जीवन के प्रत्येक पहलू को न्यूनाधिक रूप से प्रभावित करते हैं, वह पर्यावरण है।"[1] यह पर्यावरण मनुष्य के लिए अत्यंत आवश्यक है।

वर्तमान समय में मनुष्य पर्यावरण असंतुलन की समस्या से जूझ रहा है। अपने स्वार्थ के लिए मनुष्य ने पर्यावरण तंत्र को बिघाड़ दिया है। प्राकृतिक संसाधनों के अतिप्रयोग से जल, वायु, मृदा, ध्वनि आदि घटक प्रदुषित हो गए है। "भूमि, जल, वायू वे प्राकृतिक घटक है, जिनके अभाव में पृथ्वी पर किसी भी प्रकार के जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। प्रकृति द्वारा पर्याप्त मात्रा में करोड़ों वर्षों से ये कारक जीवों को प्रदत्त है। यदि किन्हीं कारणों से इनमें विकार उत्पन्न हो जाता है तब जीवन अधिक समय तक पृथ्वी पर न रह सकेगा। विभिन्न प्राकृतिक तत्वों में उत्पन्न यही विकृति प्राकृतिक प्रदूषण कहलाती है।"2 पर्यावरण के इस प्रदूषण को कम करने के लिए, पर्यावरण को बचाने के लिए, प्राकृतिक सुरक्षा के लिए जो विचारधारा आगे आयी या आंदोलन खड़ा हुआ उसे पर्यावरणवाद (Environmentalism) कहा गया जिसमें पर्यावरणपूरक रणनीतियाँ तथा पर्यावरण जागरुकता पर बल दिया जाता है। इसी पर्यावरणवाद प्रेरित वर्तमान हिंदी कविता में पर्यावरण या प्राकृतिक चेतना पर बल दिया जा रहा है।

वर्तमान हिंदी कविता में पर्यावरण चेतना:

प्रारंभिक काल से ही हिंदी कविता प्रकृति के साथ अभिन्न रूप से जुड़ी हुई है। वस्तुत: प्रकृति कवियों के लिए हमेशा ही काव्य प्रेरणा रह चुकी है। चैतन्यमय प्रकृति अनादिकाल से ही कवियों को अपनी ओर आकर्षित करती आ रही हे। कवि मन की संवेदनशीलता प्रकृति के साथ जुड़कर और अधिक हानिभूत होती है। संवेदनशील कवि मन को प्रकृति में कभी ईश्वरीय तत्त्व दिखाई देता है तो कभी अपने प्रियतम के दर्शन होते हैं। कवि का यह प्राकृतिक चेतना आगे जनचेतना और विश्वचेतना के रूप में परिवर्तित होती है। वर्तमान समय में प्रकृति की अपरिमित हानी देखकर प्राकृतिक चिंता के रूप में परिवर्तित हो गई है। आज का कवि प्रकृति के प्रति अत्यधिक चिंतित दिखाई देता है। उसकी यह चिंता वर्तमान कविता में मुखरित होती है।

किसी भी काल का साहित्यकार अपने युग की समस्याओं के प्रति चिंतित

दिखाई देता है। उसकी चिंता, उसकी संवेदनशीलता शब्दों का रूप धारण कर समाज को चेतना की प्रेरणा देने का काम करती है। प्रेमचंद ने घोषणा की थी कि साहित्यकार का उद्देश्य लोगों का मनोरंजन करना न होकर समाजहृदय को परिष्कृत करना होता है। कविता के संदर्भ में कविता के माध्यम से ही मैथिलीशरण गुप्त जी टिप्पणी करते हुए कहते है कि 'केवल मनोरंजन न कवि का कर्म होना चाहिए। उसमें उचित उपदेश का भी मर्म होना चाहिए।' अत: स्पष्ट है कि कवि या साहित्यकार अपनी वाणी के माध्यम से अपने युग को दिशा देने का कार्य करता है।

मनुष्यता के सामने जब धार्मिक कट्टरता का आव्हान खड़ा था तब अपने शब्दों का शस्त्र लेकर कबीर चौराहे पर खड़ा हो गया। जब देश पर विदेशी अमानवीय सत्ता ने आक्रमण किया तब भारतेंदु हरिश्चंद्र अपने नाटकों एवं कविताओं के माध्यम से राष्ट्रीयता के अग्रदूत बनकर देश की अस्मिता को बचाने के लिए सामने आए। जब देश अशिक्षा, गरीबी, अंधश्रद्धा, रुढ़ी-परंपराओं की श्रृंखला में कैद था तब प्रेमचंद जैसा युगप्रवर्तक कलम का सिपाही बनकर सामने आ गया। जब समाज निराशा के गर्त में डूबा था तब अपनी काव्य प्रतिभा के माध्यम से जनमानस में नवचैतन्य भरने के लिए प्रसाद, पंत, निराला और महादेवी वर्मा प्रभृति महाकवि शब्दों की लय, कोमलता एवं प्राकृतिक माधुर्य लेकर सामने आ गए। प्रगतिवादी, प्रयोगवादी तथा नये कवियों ने भी दिग्भ्रमित समाज को दिशा देने का कार्य किया। 20 वी शताब्दी के उत्तरार्ध्द में दलित चेतना एवं नारी चेतना कविता के केंद्र में आ गयी। वर्तमान युग में विभिन्न अस्मिताएँ जैसे आदिवासी विमर्श, अल्पसंख्याक विमर्श, किसान विमर्श, वृद्ध तथा युवा विमर्श, तृतीयलिंगी विमर्श आदि के साथ-साथ प्राकृतिक विमर्श या चेतना भी कविता में प्रमुखता से दिखाई देने लगी है। इन सब में प्रकृति का ह्रास एवं विभिन्न प्राकृतिक एवं सामाजिक-सांस्कृतिक प्रदूषण का मुद्दा चिंता एवं चिंतन के केंद्र में आ गया है। इस प्रश्न को लेकर हिंदी में केदारनाथ, भगवत रावत, विनोद कुमार शुक्ल, नरेश सक्सेना, मंगलेश डबराल आदि वरिष्ठ कवियों के साथ शिरीश कुमार मौर्य, नरेश मोहन, रंजना जायसवाल, निशान्त, चंद्रकांत देवताले, राजेश जोशी, गिरिश चन्द्र तिवारी, ज्ञानेन्द्रपति, एकान्त श्रीवास्तव,

ISBN-978-93-49938-50-2

अरूण कमल, अश्वघोष, हरीशचन्द्र पाण्डे, कुसुम शर्मा, भरत प्रसाद, दिवा भट्ट, गिरिराजशरण अग्रवाल, रामदयाल मुंडा, निर्मला टेटे, निर्मला पुतुल आदि कवि जनचेतना को आंदोलित करने का कार्य कर रहे हैं।

वर्तमान कवियों की सबसे बड़ी समस्या है जंगलों का ह्रास या पेड़ों का कम होते जाना। पेड़ ही इस पृथ्वी के वास्तविक संरक्षक हैं। पेड़ हमें छाव देते हैं, फल देते हैं, फूल देते हैं, ऑक्सिजन देते हैं। पेड़ ही पशु-पक्षियों को आधार और जलचक्र को गति देते हैं। इसी कारण पेड़ पर्यावरण या प्रकृति का एक अति महत्वपूर्ण तत्त्व है। परंतु विभिन्न कारणों से पेड़ो की संख्या दिन-ब-दिन कम होती जा रही है। इस समस्या की ओर निर्देश करते हुए निर्मला पुतुल 'बूढ़ी पृथ्वी का दु:ख' कविता में कहती है- "कुल्हाडियों के वार सहते / किसी पेड़ की हिलती टहनियों में / दिखाई पड़ते है तुम्हें / बचाव के लिए पुकारते हजारों हजार हाथ।"[3] मगर चिंता इस बात की है कि पेड़ों की यह पुकार हमें सुनाई नहीं देती। इसी प्रकार पेड़ कटते रहेंगे तो मनुष्य का बचना असंभव है। नरेश सक्सेना इस संदर्भ में कहते है-

"अंतिम समय जब कोई नहीं जायेगा साथ
एक वृक्ष जायेगा
अपनी गौरेयों-गिलहरियों से बिछुड़कर
साथ जायेगा एक वृक्ष
अग्नि में प्रवेश करेगा वही मुझसे पहले
कितनी लकड़ी लगेगी
श्मशान की टालवाला पूछेगा
गरीब से गरीब भी सात मन तो लेता ही है
लिखता हूँ अंतिम इच्छाओं में
कि बिजली की दाहघर में हो मेरा संस्कार
ताकि मेरे बाद
एक बेटे और एक बेटी के साथ

एक वृक्ष भी बचा रहे संसार में।"[4]

आज का मनुष्य विकास के नाम पर बड़ी-बड़ी परियोजनाओं के माध्यम से प्राकृतिक संतुलन को बिघाड़ने का काम कर रहा है। आधुनिक समय में धीरे-धीरे जंगल कम होते गए, पेड़ कटते गए, पहाड़ तहस-नहस हो गए, नदियाँ, समुद्र प्रदुषित हो गए, हानिकारक रसायनों का अत्याधिक प्रयोग होने लगा। हवा, ध्वनि, मृदा आदि प्रदूषित हो गए। इस प्राकृतिक असंतुलन के कारण संपूर्ण जीवचक्र संकट में आ गया है। इस ओर संकेत करते हुए भवानी प्रसाद मिश्र कहते हैं-

"आसमान में चक्कर काटते
पंछियों के दल नजर नहीं आते
क्योंकि बनाते थे जिन पर घोसले
वे वृक्ष कट चुके हैं या सूख चुके हैं
कही नही बचे हरे वृक्ष
न ठीक सागर है, न ठीक नदियाँ।"[5]

पर्यावरण चेतना के दृष्टिकोण से हिंदी की आदिवासी विमर्श केंद्रित कविता अत्यंत महत्वपूर्ण है। आदिवासी समाज प्रकृति के गोद में ही अपना जीवन यापन करता है। उनका जीवन प्रकृति से अभिन्न रूप से जुड़ा है। उनका रहन-सहन, खान-पान, संस्कृति, जीवनयापन पूर्ण रूप से प्रकृति पर निर्भर है। उनके जीवन को प्रकृति से अलग नहीं किया जा सकता। वस्तुत: उनका जीवन प्रकृति का पर्यायवाची है। इसी कारण प्रकृति की हानि से सबसे ज्यादा अगर कोई चिंतित है ते वह आदिवासी समुदाय है। अत: आदिवासी जीवन केंद्रित कविता में प्राकृतिक चेतना अधिक मात्रा में दिखाई देती है। हिंदी के आदिवासी विमर्श केंद्रित कवियों ने पर्यावरण की समस्या को मुख्य रूप से उठाया है। आदिवासी कवियित्री ग्रेस कुजूर 'हे समय के पहरेदारों' कविता में मनुष्य की स्वार्थपरकता और पर्यावरण असंतुलन का चित्रण करते हुए कहती है- "आज तुम / अपने स्वार्थ के लिए / पर्वतों के पत्थर / तोड़ रहे हो / बारूदी गंध से / जीवन को मरोड़ रहे हो / क्या कभी नदिया / लौटकर पूछेगी / अपने खण्डहर होते / पर्वतों से / कि कहा

ISBN-978-93-49938-50-2

गया /उनका उद्गम? / कहाँ गया वैभव? / तब पर्वत रोएगा / सूख जाएँगी उसकी धाराएँ।"[6]

कवि प्रभात ने प्राकृतिक गंध के मिटने की चिंता व्यक्त की है। कवि अशोक सिंह ने 'सवाल परगना का दु:ख' नामक कविता में जंगलों के उजड़ने तथा पहाड़ो के गायब होने, नदी एवं तालाबों के सिकुड़ने तथा बैल, गाय, बकरी आदि पालतू जानवरों के घटने का दु:ख व्यक्त किया है। तरुण कुमार लाहा ने 'आदिवासी कविता : इतिहास के अंदर' में विकास के नाम पर किए जाने वाले प्राकृतिक अतिक्रमण का चित्रण निम्न रूप में किया है-"इतिहास से बाहर आकर / जब भटकते हैं हम जंगलों में / पहाड़ी झरनों से / बुझते हैं अपनी प्यास / जंगल के वृक्षों से / बोलते-बतियाते / तभी आ धमकते हैं बाहरी लोग / कहना चाहते हमें विकास की बात / ... फिर पहाड़ों को छिलक / किया जाता है समतल / जिनके झरने बुझाना चाहते हैं हमारी प्यास।"[7]

सांस्कृतिक एवं सामाजिक पर्यावरणीय चेतना

पर्यावरण के अंतर्गत प्राकृतिक तत्वों के साथ-साथ सांस्कृतिक एवं सामाजिक घटक भी आते हैं। सांस्कृतिक एवं सामाजिक घटकों के अंतर्गत मनुष्य के आचार-विचार, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक व्यवहार, शिक्षा, संस्कार, उसकी बुद्धि, विवेक, अनुभूतियाँ आदि विभिन्न बातों का समावेश होता है। वर्तमान परिदृश्य में मनुष्य का सांस्कृतिक पर्यावरण भी दूषित दिखाई दे रहा है। वस्तुत: मनुष्य का विवेक एवं उसकी संस्कृति उसे अन्य प्राणियों से अलग करती है। "मनुष्य को सृष्टि के अन्य प्राणियों से पृथक एक श्रेष्ठ प्राणी बनाने तथा आदिम अवस्था के घुमन्तु टोलों को सभ्य-संस्कृति समाजों के रूप में परिणत करने का श्रेय संस्कृति को ही जाता है। सदृढ-समृद्ध संस्कृति विकसित समाज की प्रथम परिचायक होती है।"[8] यही संस्कृति मनुष्यता एवं मानवी समाज का आधार है। मगर आज समाज एवं उसकी संस्कृति का ढाँचा डगमगाता नजर आ रहा है। परिवार टूट कर बिखर रहे है। अकेलापन, कुंठा, पीड़ा, यातनाएँ, दु:ख, क्रूरता, हिंसा, स्वार्थ तथा अनेक प्रकार की इतर समस्याओं ने सांस्कृतिक, सामाजिक पर्यावरण भी बिखर रहा है। इसकी चिंता भी वर्तमान कविता में दिखाई देती है। इस सांस्कृतिक-सामाजिक चेतना

का एक सशक्त उदाहरण निम्न पंक्तियों में दिखाई देता है-

"सत्य ही क्या अब तो
अहिंसा का भी नहीं है पता
देखो न! बीच चौराहे पर गांधी जी की प्रतिमा के नीचे
अभी-अभी फटा है बम
बिखर गयी है शांति की धज्जियाँ
अब 'प्रेम' पर है वक्त की नजर
'प्रेम' के विलुप्त होते ही कहीं
विलुप्त न हो जाए 'पृथ्वी'।"[9]

अत: स्पष्ट है कि वर्तमान हिंदी कविता में पर्यावरण चेतना काफी सशक्त रूप में व्यक्त हुई है। पर्यावरण चेतना के अंतर्गत कवियों ने प्राकृतिक चेतना तथा संस्कृति एवं सामाजिक पर्यावरण दोनों का चित्रण किया है। पर्यावरण असंतुलन की चिंता व्यक्त करते हुए कवि आज के मनुष्य को सचेत करता है। उसे पर्यावरण को बचाने की प्रेरणा देता है। यह पर्यावरण चेतना वर्तमान कविता में काफी सशक्त रूप में अभिव्यक्त हुई है।

संदर्भ:-

1. सुरेन्द्रकुमार जैन-इक्कीसवी सदी के प्रथम दशक की हिंदी कविता में पर्यावरणीय चेतना (शोध-प्रबंध), 2016, पृष्ठ 02
2. वहीं, पृष्ठ 02-03
3. निर्मला पुतुल, नगाड़े की तरह बजते शब्द, पृष्ठ 31
4. सुरेन्द्रकुमार जैन, इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक की हिंदी कविता में पर्यावरणीय चेतना (शोध-प्रबंध), 2016, पृष्ठ 09
5. वहीं, पृष्ठ 06
6. हरिराम मीणा (संपा.), समकालीन आदिवासी कविता, अलख प्रकाशन, जयपुर, प्रथम संस्करण 2013, पृष्ठ 110
7. अरावली उद्घोष, जुलाई 2024, पृष्ठ 54

ISBN-978-93-49938-50-2

8. दिवा भट्ट, उत्तराखंड की सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ, भूमिका से अश्वघोष-सीढ़ियों पर बैठा पहाड़, पृष्ठ 113

आधुनिक हिन्दी कहानी साहित्य में पर्यावरण चेतना (जल विमर्श के विशेष संदर्भ में)

कुणाल भूषण
शोध छात्र
दादा पाटील महाविद्यालय कर्जत जि. अहिल्यानगर

21 वीं सदी में पर्यावरण संकट वैश्विक स्तर पर गहराता जा रहा है, जिसमें जल संकट एक प्रमुख चिंता का विषय है। जल केवल जीवनदायी तत्त्व नहीं, बल्कि एक सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक विमर्श का केंद्र बन गया है। जल के इर्द-गिर्द आज न केवल पारिस्थितिक असंतुलन के सवाल खड़े हो रहे हैं, बल्कि जलवायु परिवर्तन, विस्थापन, खाद्य संकट और सामाजिक असमानता जैसे बहुआयामी विषय भी जुड़ गए हैं।

पर्यावरण चेतना का अभिप्राय केवल प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा से नहीं, बल्कि मानवीय जीवन के प्रति एक गहन संवेदनशीलता और जिम्मेदारी से है। जब साहित्य में पर्यावरण चेतना की बात की जाती है, तो वह केवल प्रकृति चित्रण तक सीमित नहीं रहती, बल्कि वह उस वैचारिक दृष्टिकोण को सामने लाती है, जो मनुष्य और प्रकृति के सह-अस्तित्व को आवश्यक मानती है।

हिन्दी साहित्य, विशेषकर कहानी विधा, समाज की बदलती चेतना को परिलक्षित करने में सक्षम रही है। आधुनिक हिन्दी कहानियाँ न केवल सामाजिक यथार्थ का दस्तावेज़ हैं, बल्कि वे पर्यावरणीय चेतना की वाहक भी हैं। कहानीकारों ने अपने कथा-संरचना में जल जैसे तत्वों को मात्र पृष्ठभूमि के रूप में न रखकर, उन्हें एक जीवंत पात्र, एक प्रतीक और एक विमर्श के रूप में चित्रित किया है।

ISBN-978-93-49938-50-2

जल विमर्श पर्यावरण चेतना के अंतर्गत एक महत्वपूर्ण आयाम है। यह केवल जल संकट या जल संरक्षण तक सीमित नहीं, बल्कि इसके अंतर्गत सामाजिक विषमता, राजनीतिक उपेक्षा, तकनीकी प्रगति का दुरुपयोग और मनुष्य की नैतिक गिरावट जैसे पहलू भी आते हैं। इस प्रकार, जल विमर्श को एक बहुआयामी और बहुसांस्कृतिक दृष्टि से देखा जाना आवश्यक है।

यह शोध-पत्र चार समकालीन कहानियों के माध्यम से जल विमर्श का विश्लेषण करता है। ये कहानियाँ हैं – रामदेव शुक्ल की 'बाढ़', नरेंद्र नागदेव की "सब मैरीन", मृदुला सिन्हा की "रद्दी की वापसी", और जयनन्दन की "कल्याण का अंत"। इन कहानियों में जल न केवल कथानक का हिस्सा है, बल्कि सामाजिक विषमता, अस्तित्ववादी संकट और पर्यावरण चेतना का प्रतीक भी है। ये कहानियाँ स्पष्ट करती हैं कि जल का प्रश्न केवल भौतिक संसाधन का नहीं, बल्कि यह जीवन, संस्कृति और अस्तित्व का प्रश्न है।इन रचनाओं में जल का चित्रण केवल यथार्थ के आधार पर नहीं, बल्कि प्रतीकों, बिंबों और दार्शनिक दृष्टिकोण से भी हुआ है, जो जल विमर्श को एक नई गहराई प्रदान करता है। यह शोध-पत्र इसी गहराई को उजागर करने का प्रयास है, जिससे हिन्दी कहानी साहित्य में पर्यावरण चेतना की व्यापकता और गहराई को समझा जा सके।

भारतीय संस्कृति में जल को पवित्र और जीवनदायी माना गया है। ऋग्वेद से लेकर लोक साहित्य तक जल को 'अमृत' और 'जीवन' की संज्ञा दी गई है। 'आपो हि ष्ठा मयोभुवस्तन न ऊर्जे दधातन' जैसे वैदिक मंत्रों में जल को ऊर्जा और कल्याण का स्रोत माना गया है। गंगा, यमुना, सरस्वती जैसी नदियाँ न केवल भौगोलिक धाराएँ हैं, बल्कि वे सांस्कृतिक चेतना का भी आधार रही हैं। जल के साथ भारतीय जीवन की आस्था, परंपरा, और तात्त्विक दृष्टिकोण गहराई से जुड़ा है। किन्तु आधुनिक समय में जल का यह

पवित्र और कल्याणकारी रूप संकट में है – नदियाँ सूख रही हैं, भूजल स्तर गिर रहा है, जल के स्रोत प्रदूषित हो रहे हैं और जलवायु परिवर्तन के कारण बाढ़, सूखा, तूफान जैसी आपदाएँ निरंतर बढ़ रही हैं। ये संकट केवल भौतिक नहीं हैं, बल्कि वे मानवीय जीवन की स्थिरता, समाज की समरसता और सांस्कृतिक धरोहर पर भी गहरा प्रभाव डाल रहे हैं।

साहित्य, विशेष रूप से हिन्दी कहानी, समाज में उत्पन्न इन संकटों की न केवल अभिव्यक्ति करती है, बल्कि वह चेतना को जागृत कर बदलाव की संभावनाओं को भी जन्म देती है। हिन्दी कहानीकारों ने जल संकट को केवल वर्णनात्मक ढंग से प्रस्तुत नहीं किया, बल्कि उन्होंने इसके सामाजिक, राजनीतिक और दार्शनिक पक्षों को भी उद्घाटित किया है। रामचन्द्र शुक्ल से लेकर प्रेमचंद, अज्ञेय और निर्मल वर्मा तक अनेक साहित्यकारों ने प्रकृति के साथ मनुष्य के संबंध की जटिलता को उद्घाटित किया है। समकालीन कहानीकार इस परंपरा को आगे बढ़ाते हुए पर्यावरणीय संकट, विशेषकर जल संकट को एक सघन और समकालीन विमर्श के रूप में प्रस्तुत करते हैं। उनके लेखन में जल केवल एक संसाधन नहीं, बल्कि संवेदना, चेतना और संघर्ष का प्रतीक बनकर उभरता है।

इस सन्दर्भ में जल विमर्श केवल भौगोलिक या पारिस्थितिक विषय नहीं, बल्कि यह सामाजिक न्याय, लैंगिक असमानता, औद्योगीकरण और पूँजीवाद से जुड़ी संरचनाओं को भी उजागर करता है। जल का अभाव केवल प्यास का नहीं, बल्कि अधिकार, अस्तित्व और आत्मसम्मान का भी संकट बन जाता है।

इस प्रकार, आधुनिक हिन्दी कहानी में जल विमर्श पर्यावरण चेतना का एक महत्वपूर्ण स्तंभ बनकर उभरता है, जो साहित्य को यथार्थ के गहरे स्तरों तक ले जाता है

ISBN-978-93-49938-50-2

और पाठक को न केवल चिंतनशील बनाता है, बल्कि सामाजिक उत्तरदायित्व की ओर भी प्रेरित करता है।

आधुनिक हिन्दी कहानियों में पर्यावरण चेतना: रामदेव शुक्ल की कहानी 'बाढ़' के संदर्भ में

रामदेव शुक्ल की कहानी 'बाढ़' एक गहरी सामाजिक और पर्यावरणीय चेतना से ओत-प्रोत रचना है, जिसमें जल की भूमिका केवल प्राकृतिक तत्त्व के रूप में नहीं, बल्कि एक विनाशकारी शक्ति के रूप में उभरती है। यह जल बाढ़ के रूप में प्रकट होकर न केवल खेत-खलिहानों को नष्ट करता है, बल्कि जीवन की संपूर्ण व्यवस्था को तहस-नहस कर देता है। इस कहानी का मूल आशय है कि यदि जल के साथ मानवीय व्यवहार असंवेदनशील, लालची और नियोजनविहीन हो, तो वह जीवनदायिनी शक्ति विनाश की ताकत बन जाती है।

'बाढ़' कहानी केवल प्राकृतिक आपदा की कथा नहीं है, बल्कि यह मानवीय कुप्रबंधन, अतिक्रमण, भ्रष्टाचार और शासन की उदासीनता के कारण उत्पन्न कृत्रिम आपदा की व्याख्या करती है। इसमें यह दिखाया गया है कि किस प्रकार नदियों के किनारे अवैध निर्माण, जल निकासी की उपेक्षा और तटबंधों की खराब योजना बाढ़ को और अधिक भयानक बना देते हैं। कहानी का मूल कथ्य ग्रामीण जीवन के संघर्ष, पीड़ा और बेबसी को बाढ़ की भयावहता के माध्यम से प्रस्तुत करता है। पात्रों के माध्यम से दिखाया गया है कि बाढ़ केवल एक जलप्रलय नहीं, बल्कि वह एक सामाजिक संकट है जिसमें विस्थापन, भूख, बीमारी और अस्तित्व का संकट समाहित है।

जल और सामाजिक असमानता

बाढ़ का सबसे बड़ा प्रभाव समाज के कमजोर, गरीब और वंचित तबकों पर पड़ता है। यह कहानी स्पष्ट करती है कि आपदा के समय सबसे अधिक हानि उन्हीं वर्गों

को होती है, जिनके पास न तो संसाधन हैं और न ही सुरक्षा के साधन। जल यहाँ सामाजिक असमानता को और गहराता है।

जल और पर्यावरणीय चेतना

कहानी अप्रत्यक्ष रूप से जलवायु परिवर्तन, वनों की कटाई, अंधाधुंध शहरीकरण और औद्योगीकरण जैसे मानवजनित कारणों की ओर संकेत करती है। यह चेतावनी देती है कि यदि पर्यावरण के प्रति हमारी दृष्टि संवेदनशील नहीं होगी, तो प्रकृति का संतुलन बिगड़ेगा और ऐसी आपदाएँ बार-बार मानव समाज को चुनौती देंगी।

जल का दार्शनिक विमर्श:

'बाढ़' में जल जीवन और मृत्यु दोनों का प्रतीक बनता है। एक ओर जल जीवन की आवश्यकता है, तो दूसरी ओर उसकी अतिशयता मृत्यु का कारण बनती है। यह द्वैत मनुष्य के अस्तित्व के संकट और प्रकृति के प्रति उसकी जटिल भूमिका को उजागर करता है। इस कहानी का प्रमुख संदेश है कि प्रकृति और मनुष्य के संबंध में संतुलन आवश्यक है। बाढ़ केवल एक आपदा नहीं, बल्कि वह चेतावनी है कि यदि हमने जल और पर्यावरण के प्रति सजगता नहीं बरती, तो भविष्य में संकट और भी भयावह हो सकते हैं। यह कहानी पाठकों को जागरूक बनाती है कि जल के साथ हमारा रिश्ता सम्मान और जिम्मेदारी का होना चाहिए।

नरेंद्र नागदेव की कहानी 'सब मैरीन' में पर्यावरण चेतना

नरेंद्र नागदेव की कहानी 'सब मैरीन' जल की भयावहता और उससे जुड़ी मानवीय संवेदनशीलता की कमी को उजागर करती है। कहानी में एक सुरक्षा कर्मचारी सब्मरीन की नियमित रक्षण गश्ती के दौरान जल के अंदर फंस जाता है। यह जल का विभत्स रूप है जो जीवन के लिए संकट उत्पन्न करता है, वहीं मानवीय और संस्थागत संवेदनहीनता की हदें भी पार होती दिखती हैं।सब्मरीन तकनीक और वैज्ञानिक उन्नति

ISBN-978-93-49938-50-2

का प्रतीक है, जो समुद्र की गहराइयों में इंसानी पहुँच को संभव बनाती है। कहानी में इस सब्मरीन पर सुरक्षा कर्मचारी अपनी ड्यूटी निभा रहा होता है, लेकिन अचानक वह जल के गर्भ में फंस जाता है। इस घटना के बाद भी प्रभान विभाग और संबंधित संस्थान उसे बचाने या उसकी मौत के बाद उचित कदम उठाने में अनदेखी करते हैं। इस तरह यह कहानी न केवल पर्यावरणीय संकट, बल्कि मानवीय असंवेदनशीलता का भी चित्रण करती है।

कहानी में सब्मरीन की गहराई और जल के अज्ञात रहस्यों के बीच फंसे कर्मचारी की दशा जीवन और मृत्यु के बीच संघर्ष का रूपक है। कहानी जल की विभत्सता, भय और अस्तित्व के संकट को सामने लाती है। कर्मचारी की पीड़ा, एकांत और जिंदा रह जाने की इच्छा, मानव जीवन की संवेदनशीलता को दर्शाती है, जो पूरी व्यवस्था के बेमतलब और निष्क्रिय होने पर सवाल उठाती है। कहानी का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि जल में फंसे कर्मचारी की त्रासदी के बाद भी संबंधित विभाग, अधिकारी और प्रभान विभाग कोई प्रभावी कार्रवाई नहीं करते। वे स्थिति को दबाने या टालने का प्रयास करते हैं, जो मानवीय संवेदना के अभाव का द्योतक है। यह पर्यावरण संकट के साथ-साथ सामाजिक और संस्थागत उदासीनता का एक मार्मिक चित्रण है।

कहानी यह भी दिखाती है कि तकनीकी प्रगति चाहे जितनी भी विकसित क्यों न हो, जल की गहराइयों में मानव की सीमाएँ अपरिहार्य हैं। सब्मरीन जैसे उपकरणों के माध्यम से जल के भीतर जाना संभव है, परन्तु जल की विभत्सता और अप्रत्याशितता के सामने तकनीक असहाय हो जाती है। इससे यह भी संकेत मिलता है कि जल को केवल भौतिक संसाधन मानकर उससे खेलना खतरनाक हो सकता है।

जल इस कहानी में जीवन की धारा होने के साथ-साथ मृत्यु और अस्तित्व की गहराइयों का प्रतीक भी है। कर्मचारी का जल के भीतर फंस जाना मनुष्य के जीवन में

आने वाली अनिश्चितताओं, भय और संघर्षों का सूचक है। साथ ही, यह जल के प्रति मानवीय व्यवहार और पर्यावरण चेतना की कमी की आलोचना करता है "सब मैरीन" न केवल जल के खतरनाक रूप को प्रकट करती है, बल्कि यह भी चेतावनी देती है कि यदि पर्यावरण और उसमें रहने वाले जीव-जंतुओं के प्रति संवेदनशीलता न लाई गई, तो जल प्राकृतिक रूप में विभत्स शक्ति बन सकता है। साथ ही यह कहानी सामाजिक और प्रशासनिक उदासीनता के खिलाफ भी एक तीखा व्यंग्य प्रस्तुत करती है, जो पर्यावरण संकट को और गहरा कर देती है।

जयनन्दन की कहानी "कल्याण का अंत" में पर्यावरण चेतना

जयनन्दन की कहानी"कल्याण का अंत"जल विमर्श के संदर्भ में पर्यावरण चेतना का अत्यंत मार्मिक और विचारोत्तेजक उदाहरण प्रस्तुत करती है। यह कहानी एक तालाब – कल्याण – के विनाश के बहाने उस पर्यावरणीय पतन और सामाजिक बेहोशी की कहानी कहती है, जो आधुनिक तथाकथित 'विकास' के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों के दोहन को जायज़ ठहराती है।

'कल्याण' इस कहानी में एक पुराने, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक रूप से महत्वपूर्ण तालाब का नाम है। यह तालाब केवल जल स्रोत नहीं, अपितु एक जैविक, सामाजिक और भावनात्मक इकाई के रूप में स्थापित है। कोचई मंडल, जो इसका संरक्षणकर्ता है, एक पर्यावरण प्रेमी और समाज के प्रति उत्तरदायी व्यक्ति के रूप में उभरता है। वह वर्षों से "कल्याण" की देखभाल करता रहा है। लेकिन स्थानीय बिल्डर और उसका लालची पुत्र इस सूखते तालाब की ज़मीन पर नज़र गड़ाए बैठे हैं। वे एक षड्यंत्र के तहत पहले तालाब को सूखने देते हैं और फिर उस पर अवैध रूप से बहुमंजिला इमारतें खड़ी कर देते हैं।

ISBN-978-93-49938-50-2

यह कहानी एक अकेले तालाब की नहीं, बल्कि उस पूरे पारिस्थितिक और सामाजिक संतुलन की कहानी है जो धीरे-धीरे खत्म हो रहा है। "कल्याण" नामक तालाब धीरे-धीरे सूखता है – यह सूखना प्राकृतिक नहीं, बल्कि मानवीय उपेक्षा और लालच का परिणाम है। यह एक सांस्कृतिक मृत्यु है, जो कोचई मंडल जैसे लोगों की चेतावनी के बावजूद घटित होती है। कोचई का संघर्ष हमें दिखाता है कि पर्यावरण को बचाने की लड़ाई न केवल प्रकृति के साथ, बल्कि मनुष्य की स्वार्थी प्रवृत्तियों से भी है। तालाब का सूखना केवल एक जलस्रोत की समाप्ति नहीं, बल्कि पूरे क्षेत्र के पारिस्थितिकी तंत्र की क्षति है। यह कहानी हमें यह समझाने की कोशिश करती है कि कैसे जलवायु संकट केवल बड़े मुद्दों तक सीमित नहीं, बल्कि हमारी स्थानीय संरचनाओं – तालाब, पोखर, नदी – के विनाश में भी प्रकट होता है। जल का लोप कृषि, जलचर, भूजल स्तर, और समाज की स्मृति सभी को प्रभावित करता है।

बिल्डर और उसका पुत्र इस कहानी में तथाकथित 'विकास' के प्रतीक हैं, जो प्राकृतिक संसाधनों को मुनाफे की ज़मीन समझते हैं। कहानी यह प्रश्न उठाती है कि क्या बहुमंज़िला इमारतें, मॉल, और प्लॉट विकास का प्रमाण हैं जब उनकी नींव एक पर्यावरणीय अपराध पर टिकी हो? इस कहानी में पर्यावरण चेतना उस स्थानीय दृष्टि से आती है, जहाँ विकास के नाम पर विनाश को स्वीकार करने से इनकार किया गया है। कोचई मंडल एक सजग, संवेदनशील और सचेत नागरिक है, जो न केवल तालाब की देखभाल करता है, बल्कि लोगों को भी उसके महत्त्व के बारे में जागरूक करता है। वह आधुनिक समाज की उस हाशिये पर खड़ी आत्मा का प्रतिनिधित्व करता है, जो तकनीकी और भौतिक प्रगति के बावजूद नैतिक और पारिस्थितिक मूल्यों को प्राथमिकता देती है। उसका विरोध, संघर्ष और हार कहानी को एक त्रासदी में बदल देती है। "कल्याण" यहाँ केवल एक भौतिक जल निकाय नहीं, बल्कि सामूहिक चेतना,

सांस्कृतिक विरासत और पारिस्थितिक संतुलन का प्रतीक बनता है। उसका अंत केवल एक स्थान का नहीं, बल्कि समाज की उस समझ का अंत है जो जल को जीवनदायी समझती थी।

'कल्याण का अंत' एक गहन पर्यावरणीय चेतावनी है। यह हमें बताती है कि यदि हम जल स्रोतों को केवल भूमि-हड़पने या निर्माण स्थलों के रूप में देखेंगे, तो हम न केवल अपने पर्यावरण को, बल्कि अपनी सांस्कृतिक स्मृति और अस्तित्व को भी खो देंगे। यह कहानी उस गहरी चिंता का दस्तावेज है जो स्थानीय पारिस्थितिकी की अनदेखी के परिणामस्वरूप उपजती है

निष्कर्ष

आधुनिक हिन्दी कहानियों में जल विमर्श केवल पर्यावरणीय चेतना का प्रतिबिंब नहीं, बल्कि एक समग्र जीवन-दृष्टि का संकेतक है। रामदेव शुक्ल की 'बाढ़', नरेंद्र नागदेव की 'सब मैरीन', मृदुला सिन्हा की 'रद्दी की वापसी' और जयनन्दन की 'कल्याण का अंत' ये सभी कहानियाँ जल को एक भिन्न और गहराई से अनुभूत प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करती हैं। इन रचनाओं में जल न तो मात्र उपादान है, न ही केवल संकट का कारण; वह एक चेतना, एक विमर्श और एक अनुभव बन जाता है।इन कहानियों में जल एक ओर जहाँ प्राकृतिक आपदाओं, संसाधन संकट और विकास की विफलता का सूचक बनकर सामने आता है, वहीं दूसरी ओर वह मानवीय संबंधों, अस्तित्व की बेचैनियों और सामाजिक असमानता को भी उजागर करता है। जल के माध्यम से ये कहानियाँ हमें न केवल बाह्य जगत की विसंगतियों से परिचित कराती हैं, बल्कि आत्म-जगत की गहराइयों में उतरने की प्रेरणा भी देती हैं। जल संकट का प्रभाव सबसे अधिक वंचित, ग्रामीण और संवेदनशील वर्गों पर पड़ता है।आधुनिक जीवन शैली, उपभोक्तावादी दृष्टिकोण और सरकारी तंत्र की विफलता जल संकट को और जटिल

ISBN-978-93-49938-50-2

बनाती है।साहित्यकारों ने जल को केवल विषय नहीं, एक जीवंत पात्र, एक दर्शन और एक चेतावनी के रूप में रचा है। अतः यह कहा जा सकता है कि आधुनिक हिन्दी कहानीकारों ने जल विमर्श को अपने साहित्य में केवल यथार्थ चित्रण के लिए नहीं, बल्कि चेतना जागरण, सामाजिक पुनर्विचार और वैचारिक हस्तक्षेप के लिए प्रयोग किया है।

ग्रंथ सूची

1) शुक्ल रामदेव, बाढ़, राजकमल प्रकाशन।
2) नागदेव नरेंद्र, सब मैरीन, कथादेश।
3) जयनन्दन, कल्याण का अंत, हंस पत्रिका।
4) रमेश गौतम, साहित्य और पर्यावरण, वाणी प्रकाशन।
5) भारत जल पोर्टल (www.indiawaterportal.org)।
6) अर्चना वर्मा, जल विमर्श और हिन्दी कथा साहित्य, आलोचना।
7) में पर्यावरण चेतना, प्रो. सुखदेव सिंह मिन्हास

सुषमा मुनींद्र की 'इस्तेमाल' कहानी में पर्यावरण चेतना

अश्विनी भानुदास आढवळकर

शोध छात्रा– हिंदी

पु. अ. हो. सोलापूर विश्वविद्यालय, सोलापूर

ई मेल - ashwiniadhawalkar@gmail.com

शोधसार –

आधुनिक युग में मानव के जीवन में अनेक परिवर्तन हो रहे हैं। वह अपने स्वार्थ हेतू एवं लालसा के कारण किसी का भी इस्तेमाल कर रहा हैं। मानव पर्यावरण को भी अपने वश में करना चाहता है लेकिन वह भूल गया है कि पर्यावरण में न जाने कितने जीव जंतू है, उनका विनाश करके खुद भी विनाश की ओर चला जा रहा है। आज प्रकृति को बचाना बहुत आवश्यक है। हिंदी साहित्य में भी प्रकृति के संदर्भ में अनेक विषयों का अंकन किया है। एक साहित्यकार अपनी लेखनी के द्वारा समाज में पर्यावरण चेतना जागृत करने का प्रयास करता है। लेखिका सुषमा मुनींद्र ने भी पर्यावरण से जुड़ी अर्थपूर्ण एवं महत्त्वपूर्ण कहानी 'इस्तेमाल' में चिड़िया ने एक मानव को आकर्षित किया है यह चित्रण किया है। लेखिका ने चिड़िया के बारे में बहुत संवेदनशील लेखन किया है।

बीज शब्द :- चिड़िया, घोसला, संवेदनशील पशु-पक्षी, पर्यावरण, झाडू, इस्तेमाल।

उद्देश्य

1) पर्यावरण की संकल्पना समझाना।
2) सुषमा मुनींद्र की इस्तेमाल कहानी में पक्षीयों की संवेदना व्यक्त करना।
3) मानव अपने स्वार्थ हेतु पशु-पक्षी का इस्तेमाल करता है यह देखना।

ISBN-978-93-49938-50-2

प्रस्तावना

मानव एक समाज प्रिय प्राणी है। वह अपने चारों तरफ ऐसे पर्यावरण पर आधारित है जिसका असर उसके व्यक्तित्व के विकास पर होता हैं। पर्यावरण में न जाने कितने जीव जंतू होते है वे सब उसी के अनुकूल जीवन जीने का प्रयास करते है लेकिन मानव एक ऐसा प्राणी है, जो पर्यावरण को अपने वश में करना चाहता है। पर्यावरण को बचाने के लिए अनेक हस्तियों ने प्रयास किया। हिंदी साहित्य में अनेक साहित्यकारों ने अपने साहित्य में पर्यावरण को अनन्य साधारण महत्त्व दिया है। रामायण, महाभारत जैसे प्राचीन महाकाव्यों में भी पर्यावरण के महत्त्व को समझाया हैं। भारतीय समाज में वटवृक्ष को देवता माना जाता है। क्योंकि मानव अपनी स्वार्थलोलुपता के कारण इस वृक्ष को तोड न दे इस वजह से इस वृक्ष को प्राचीन साहित्य ने देवता का स्थान दिया गया है। मानव को स्वयं को जानने हेतु, स्वयं को सुरक्षित रखने हेतु पर्यावरण का संवर्धन करना बहुत जरुरी है।

आज के युग में पर्यावरण एवं उसके संरक्षण की समस्या जटील हो रही हैं। मानव का मानसिक प्रदूषण हो रहा है। इस वजह से जमीन, जंगल का अनियंत्रित दोहन और वन्यजीव की हिंसा तथा तस्करी कर रहा हैं। मानव के इस भोग के कारण पर्यावरण से दूर्लभ प्रजातियाँ नष्ट हो रही हैं। मानव वन्यजीवों का अपने स्वार्थहेतु अपने शारिरीक, मानसिक, स्वास्थ के लिए उनका इस्तेमाल कर रहा हैं। ऐसी ही छोटी-सी 'इस्तेमाल' कहानी में लेखिका सुषमा मुनींद्र ने चिड़िया के जीवन की संघर्षमय गाथा को हमारे सम्मुख रखने का प्रयास किया है।

'इस्तेमाल' इस कहानी का नायक 'वे' सेवानिवृत्त पुलिस अधिकारी है। उनके बरामदे में रोज चिड़ियां चहकती हैं। लेकिन उन्होंने अपनी रोजमर्रा जिंदगी में उसका चहकना ध्यानपूर्वक सुना नहीं अपने सेवानिवृत्ति काल में उन्होंने चिड़ियां के चहकने का

अनुमान लगाने लगे। वे सोचने लगे किस कार्य प्रयोजन के लिये चिडिया इतना चहकती है? उनके मन में बारबार सवाल गूँज रहा। एक चिड़िया अपने अस्तित्व के लिये, अधिकार के लिये, आवश्यकता के लिए या यूँही चहकती है। वे चिड़िया को देखने के बाद अपने आप ही मुस्कुरा उठते हैं। चिड़िया के बारे में वे बहुत संवेदनशील हो गये हैं। चिडिया ने उन्हें आकर्षित कर लिया था। उनके कमरे के रोशनदान में ही चिड़िया ने घोसला बनाया था। लेकिन वे के पत्नी को चिड़िया का वहाँ पर घोंसला करना पसंद नहीं आया सफाई करते समय गुस्सा होती थी, "चिड़िया, रोशनदान में घोसला बना रही है। कचड़ा फैलाती है।... वे बोलो... घोसला बना रही है तो बनाने दों।"[1] वे चिड़िया के बारे में बहोत सतर्क रहने लगे। चिड़िया को खाने के लिए भात, पोहा या रोटी के टुकडे को फर्श पर छितरा देते थे। वे चिड़िया की प्रत्येक गतिविधि की तरफ ध्यान देने लगे। उनका और चिड़िया अनाम संबंध बन गया। "चिड़िया को क्षति न पहुँचे इसलिये वे गर्मी सह लेते हैं लेकिन पंखा नहीं चलाते। पत्नी उनकी तरह चिड़ियां को लकेर सतर्क नहीं हैं।"[2] उनकी पत्नी को चिड़िया के कारण गुस्सा आने लगा लेकिन वे अपनी पत्नी की तरफ ज्यादा ध्यान नहीं देते थे। लेकिन चिड़िया की फिक्र ज्यादा करने लगे। "चिड़िया अंडे दे चुकी है। देखो न कितना चौकस होकर इधर-उधर देखती है। जैसे डरती है कोई घोसले को नुकसान पहुँचा सकता है।"[3] एक दिन उनकी पत्नी ने बाँस के लंबे झाडू से चिड़िया के घोसलें को धराशय किया। साथ ही दो छोटे माँसपिंड चिड़िया के बच्चे दुनिया में आने से पहले ही मर गयें। एक इन्सान ने चिड़िया कूड़ा, कचरा फैलाती हैं। इस वजह से उसके वंश को मानव ने मार डाला बेचारी दोनों चिड़िया पूरी ताकत से चीखकर इसका विरोध करती है। "चिड़िया ने मेहनत से घोसला बनाया था। बच्चों के लिये दिन भर चिंतित रहती थी। तुमने सब खत्म कर दिया देख रही हो दोनों चिड़िया कितनी व्याकूल हैं?"[4] वे चिड़िया के साथ मानसिक रुप से जुड़ गये थे। चिड़िया के दो बच्चों के मरने के बाद वे पूरी तरह विचलित

ISBN-978-93-49938-50-2

हो गये। वे थोड़ी देर तक सोचने लगे उन्होंने अपनी जिंदगी के सन्नाटे को कम करने के लिए उन्होंने भी चिड़िया का इस्तेमाल किया। लेकिन उसके बच्चों की हिफाजत कर नहीं सके। पशु-पक्षी पर्यावरण को संतुलित रखने में योगदान देते हैं। मानव उनका फायदा उठाने लगता हैं। कहीं पर इन्हें माँसाहार के लिये मारा जाता है। सर्कस और फिल्मों में करतब दिखाने के प्रशिक्षण करते समय उन्हें मानसिक ओर दैहिक प्रताड़ना दी जाती है। मानव मनोरंजन के लिये पशु-पक्षी पिजड़े में कैद करते हैं। मानव अपनी सुख-सुविधा के पशु का सिर्फ इस्तेमाल करता है उनकी हिफाजत नहीं करता।

निष्कर्षत: हम देख देखते है कि, लेखिका सुषमा मुनींद्र ने 'इस्तेमाल' यह कहानी संवेदनशील एवं अर्थपूर्ण कहानी लिखी है। प्रकृति ने सारे जीव, जंतु हर छोटे-से छोटे जीवन का स्थान व महत्त्व सुनिश्चित किया है। परंतु मानव अज्ञानतावश या स्वार्थहेतू उसका गलत इस्तेमाल या दोहन कर रहा है। और अपना जीवन खुद ही संकट में डाल रहा है।

संदर्भ ग्रंथ

1. सुषमा मुनींद्र, शानदार शख्सियत (कहानी संग्रह) 'इस्तेमाल' कहानी, ग्रंथलोक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. क्र. 25
2. वही पृ. क्र. 27
3. वही पृ. क्र. 28

बाल साहित्य की भूमिका और प्रकृति प्रेम का महत्व

आशा अरुण पाटील

सहशिक्षिका- आदर्श बाल व प्राथमिक मंदिर कवठेकर प्रशाला पंढरपूर

पु. अ. हो. सोलापूर विश्वविद्यालय, सोलापूर

ई मेल - - ashapatil98@gmail.com

प्रस्तावना

बाल साहित्य न केवल बच्चों के मनोरंजन का माध्यम है, बल्कि उनके बौद्धिक, भावनात्मक और नैतिक विकास का सशक्त उपकरण भी है। यह साहित्य बच्चों की कल्पना शक्ति को पंख देता है और उन्हें जीवन के मूल्य, सहानुभूति, साहस, सहयोग जैसे गुणों से परिचित कराता है। प्रकृति प्रेम को जब बाल साहित्य में समाहित किया जाता है, तो बच्चे न केवल पेड़-पौधों, पशु-पक्षियों और जलवायु के प्रति संवेदनशील बनते हैं, बल्कि पर्यावरण संरक्षण की भावना भी उनमें स्वतः विकसित होती है। नदियों, पहाड़ों, पक्षियों या वनों पर आधारित कहानियाँ बच्चों के भीतर जिज्ञासा और संरक्षण का भाव जगाती हैं। इस प्रकार बाल साहित्य बाल मन को संवेदनशील बनाते हुए उसमें प्रकृति के साथ सहअस्तित्व की भावना विकसित करता है। यह भावी पीढ़ी को न केवल सजग नागरिक बनाता है, बल्कि पृथ्वी को एक सुरक्षित और सुंदर स्थान बनाए रखने के लिए प्रेरित भी करता है।

बच्चों के सर्वांगीण विकास में प्रकृति से जुड़ाव का महत्व

प्रकृति बच्चों के मानसिक, शारीरिक, भावनात्मक और सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जब बच्चे पेड़-पौधों, नदियों, पक्षियों और अन्य प्राकृतिक तत्वों के संपर्क में आते हैं, तो उनके भीतर जिज्ञासा, संवेदनशीलता और अवलोकन

ISBN-978-93-49938-50-2

क्षमता विकसित होती है। यह अनुभव न केवल उनके ज्ञान को बढ़ाता है, बल्कि उन्हें सजीव और निर्जीव के बीच संतुलन समझने में भी मदद करता है। प्रकृति के साथ समय बिताने वाले बच्चे अधिक एकाग्र, शांत और आत्मविश्वासी होते हैं। खुले वातावरण में खेलने, मिट्टी में हाथ लगाने, बारिश में भीगने या तितलियों का पीछा करने जैसी गतिविधियाँ उन्हें आनंद तो देती ही हैं, साथ ही उनकी प्रतिरोधक क्षमता और शारीरिक फिटनेस भी बेहतर बनाती हैं। भावनात्मक दृष्टि से, प्रकृति बच्चों में करुणा, सहानुभूति और संरक्षण की भावना उत्पन्न करती है। वे पर्यावरण के प्रति जिम्मेदार बनते हैं और संसाधनों के विवेकपूर्ण उपयोग को समझते हैं। इस प्रकार, प्रकृति से जुड़ाव बच्चों को केवल जानकारी नहीं देता, बल्कि उन्हें जीवन के साथ जुड़ने की एक गहराई प्रदान करता है, जो उनके सर्वांगीण विकास के लिए अनिवार्य है।

प्राकृतिक तत्त्वों की चित्रण शैली

साहित्य में प्राकृतिक तत्वों का चित्रण केवल सौंदर्य वर्णन तक सीमित नहीं होता, बल्कि वे भावनाओं, प्रतीकों और जीवनदर्शन के वाहक बन जाते हैं। पहाड़ों को स्थिरता, धैर्य और संघर्ष का प्रतीक माना गया है, जबकि नदियाँ जीवन की निरंतरता, गति और परिवर्तन को दर्शाती हैं।

पक्षियों के माध्यम से स्वतंत्रता, चंचलता और आशा की भावना व्यक्त की जाती है। पेड़ और फूल जीवन की कोमलता, पुनर्जन्म और सृजनात्मकता का बिंब रचते हैं।तारे, आकाश और चंद्रमा अक्सर स्वप्न, आकांक्षा और आश्चर्य से जुड़े होते हैं। इस प्रकार, प्रकृति के यह तत्व केवल दृश्य नहीं रहते, वे मानवीय भावनाओं से जुड़कर साहित्य को संवेदनशील और गहराईपूर्ण बना देते हैं। इनका प्रयोग रचनाकार की अनुभूति और दृष्टिकोण को प्रभावी ढंग से पाठकों तक पहुँचाने का माध्यम बनता है।

प्राकृतिक तत्वों का मानवीकरण

साहित्य में जब प्रकृति को मानव भावनाओं और गुणों से जोड़कर प्रस्तुत किया जाता है, तो उसे 'मानवीकरण' कहा जाता है। यह शैली पाठकों के मन में प्रकृति के प्रति आत्मीयता और संवेदनशीलता उत्पन्न करती है। जैसे—हिंदी बाल साहित्य में देवेंद्र कुमार के 'नीलकान' इस उपन्यास में गधा बात करता है। शकुंतला कालरा की कविता में मेंढक, कोयल भी सम्मेलन में गीत गाता है। मराठी साहित्य में राजीव तांबे के 'ठुस्स' 'भुताटकी' आणि इतर कथा इस कथा में फुकू और फुकी नामक चूहे मानव की तरह बर्ताव करते हैं। एकनाथ आव्हाड के 'ससा निघाला दिल्लीला' में खरगोश भी रेलगाड़ी की सैर करता है। भगवान अंजनीकर की 'जंगल जत्रा' में जानवरों की बैठक होती है तथा उसे बैठक में हाथी मुंगी शेर तथा अन्य प्राणी बातें करते नजर आते हैं। निर्मला मठपती के कविताओं में सण उत्सव भी बातें करते हैं।

अस्वल बोले दया बरं
शेंगदाण्याची चिक्की
कोल्हा बोले संपलीय
उद्या मिळेल नक्की[1]

इस प्रकार का चित्रण प्रकृति को केवल पृष्ठभूमि बनाकर नहीं छोड़ता, बल्कि उसे रचना का जीवंत पात्र बना देता है। मानवीकरण शैली बच्चों के साहित्य में भी विशेष रूप से प्रभावशाली होती है, जहाँ पेड़, पक्षी या बादल बच्चों के मित्र जैसे लगने लगते हैं। इस प्रकार, मानवीकरण साहित्य में प्रकृति को सजीव और प्रभावशाली बना देता है।

प्रकृति और नैतिक शिक्षा

प्रकृति स्वयं एक मौन शिक्षक है, जो बिना शब्दों के गहरे जीवन मूल्य सिखाती है। पेड़ निःस्वार्थ रूप से फल, छाया और हवा देते हैं — यह हमें सेवा और उदारता की

ISBN-978-93-49938-50-2

सीख देता है। नदियाँ निरंतर बहती रहती हैं, चाहे रास्ता कैसा भी हो — यह कर्मशीलता और धैर्य का पाठ पढ़ाती हैं। पक्षियों का मिलकर घोंसला बनाना सहयोग और सामूहिक प्रयास का प्रतीक है। ऋतुओं का नियमित बदलाव समय की महत्ता और परिवर्तन को स्वीकार करने की भावना विकसित करता है। जब बच्चों को प्रकृति के इन पहलुओं से जोड़ा जाता है, तो वे नैतिक मूल्यों को अनुभव के माध्यम से सीखते हैं। यह शिक्षा किसी उपदेश की तरह नहीं, बल्कि संवेदनशीलता और आत्मिक जुड़ाव के रूप में उनके भीतर रच-बस जाती है।

इस प्रकार प्रकृति न केवल सौंदर्य की अनुभूति कराती है, बल्कि मानवीय मूल्यों को सहज रूप से विकसित करने का माध्यम भी बनती है। पेड़ लगाओ, जल बचाओ, पशु-पक्षियों से प्रेम करो जैसे संदेश देती हैं।

प्रकृति से जुड़ी नैतिकता

प्रकृति न केवल सौंदर्य और जीवन का स्रोत है, बल्कि वह नैतिक मूल्यों की सबसे प्रभावशाली पाठशाला भी है। पेड़ हमें बिना कुछ मांगे फल, छाया और ऑक्सिजन देते हैं। यह हमें निःस्वार्थ सेवा और उदारता का पाठ सिखाते हैं। वे तूफान, धूप और वर्षा सहते हुए भी दूसरों को राहत देते हैं, जो सहनशीलता की जीवंत मिसाल है।नदी अपने मार्ग में आने वाले सभी अड़चनों को पार करते हुए आगे बढ़ती है। यह जीवन में निरंतरता और धैर्य की प्रेरणा देती है। सूर्य नियमित रूप से उदित होकर प्रकाश और ऊर्जा देता है, जिससे कर्मठता और कर्तव्यनिष्ठा का संदेश मिलता है।पशु-पक्षी भी एक-दूसरे के साथ सामंजस्य से रहते हैं, जिससे सहयोग और संतुलन की भावना जन्म लेती है।जब बच्चों को इन प्राकृतिक उदाहरणों से जोड़ा जाता है, तो वे इन गुणों को केवल पढ़ते नहीं, बल्कि अनुभव करते हैं।

इस प्रकार प्रकृति से जुड़ी नैतिकता बच्चों के चरित्र निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका

निभाती है और उन्हें एक जिम्मेदार और जागरूक नागरिक बनाने में मदद करती है।

आधुनिक बाल साहित्य और पर्यावरण चेतना

आधुनिक बाल साहित्य में पर्यावरण चेतना एक प्रमुख विषय के रूप में उभरकर सामने आया है। आज के लेखक बच्चों को प्रकृति के प्रति जागरूक, संवेदनशील और जिम्मेदार बनाने का प्रयास कर रहे हैं। कहानियों, कविताओं और नाटकों के माध्यम से पेड़ लगाना, जल बचाना, प्लास्टिक का उपयोग कम करना, और पशु-पक्षियों से प्रेम करना जैसे संदेश रोचक रूप में प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

मेथीची भाजी हिरवीगार
म्हणते कशी, मी उपयोगी फार
आहे जरी मी थोडी कडवट
पण हाडं तुमची करते बळकट[2]

कई आधुनिक बाल कहानियों, कविताओं और नाटकों में पात्र पेड़ों से बातें करते हैं, नदियों को बचाने की मुहिम चलाते हैं या लुप्त होते जीवों को बचाने के लिए प्रयास करते हैं। ये कथाएँ बच्चों में न केवल जानकारी देती हैं, बल्कि उनमें भावनात्मक जुड़ाव और जिम्मेदारी की भावना भी उत्पन्न करती हैं।इसके साथ ही, पर्यावरण संकट जैसे विषयों को भी बाल दृष्टिकोण से सरल भाषा में समझाया जा रहा है, ताकि बच्चे छोटी उम्र से ही पृथ्वी और प्रकृति के संरक्षण के महत्व को समझ सकें।

इस प्रकार आधुनिक बाल साहित्य पर्यावरण संरक्षण को शिक्षा और मनोरंजन के माध्यम से बच्चों के मन में गहराई से बिठाने का कार्य कर रहा है।

शिक्षा और पाठ्यक्रम में प्रकृति प्रेम की भूमिका

शिक्षा प्रणाली में प्रकृति प्रेम की भावना का समावेश बच्चों के सर्वांगीण विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है। जब पाठ्यक्रम में पेड़, नदियाँ, पशु-पक्षी, ऋतुएँ और

ISBN-978-93-49938-50-2

पर्यावरण से संबंधित विषयों को कहानियों, कविताओं, परियोजनाओं और गतिविधियों के माध्यम से प्रस्तुत किया जाता है, तो बच्चों में संवेदनशीलता और जागरूकता स्वतः विकसित होती है।

प्राकृतिक विषयों से जुड़ा अध्ययन बच्चों को केवल ज्ञान नहीं देता, बल्कि उनके भीतर सहानुभूति, करुणा और संरक्षण की भावना भी जगाता है। विद्यालयों में वृक्षारोपण, बागवानी, पक्षी अवलोकन, जल संरक्षण जैसे प्रयास शिक्षा को व्यवहारिक बनाते हैं।

इस प्रकार, पाठ्यक्रम में प्रकृति प्रेम का समावेश न केवल पर्यावरण के प्रति ज़िम्मेदारी सिखाता है, बल्कि बच्चों को प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व की भावना से भी जोड़ता है। यह भावी पीढ़ी को जागरूक और संवेदनशील नागरिक बनाने की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम है।

बाल साहित्य में प्रकृति प्रेम की सीमाएँ और चुनौतियाँ

बाल साहित्य में प्रकृति प्रेम का संदेश देना सराहनीय प्रयास है, लेकिन इसमें कुछ सीमाएं और चुनौतियाँ भी विद्यमान हैं। सबसे बड़ी सीमा यह है कि आज के शहरी परिवेश में रहने वाले बच्चों के पास प्रकृति को सीधे अनुभव करने के अवसर कम होते जा रहे हैं। ऐसे में कहानियों में वर्णित पेड़, पक्षी या नदी उनके लिए कल्पना का विषय मात्र बन जाते हैं, जिससे भावनात्मक जुड़ाव कमजोर पड़ सकता है।दूसरी चुनौती यह है कि कभी-कभी प्रकृति प्रेम केवल उपदेशात्मक रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जिससे बच्चे उसे बोझिल या निरस समझने लगते हैं। साथ ही, पर्यावरणीय विषयों को संतुलित रूप से रोचक, कल्पनात्मक और जानकारीपूर्ण बनाना भी एक साहित्यिक चुनौती है।इसके अलावा, आज के डिजिटल युग में बच्चों का ध्यान आकर्षित करना कठिन होता जा रहा है, जिससे पारंपरिक बाल साहित्य की पहुँच सीमित हो सकती है।

इन चुनौतियों के बावजूद, यदि लेखन में बाल मनोविज्ञान, कल्पनाशक्ति और संवेदनशीलता का समावेश किया जाए, तो बाल साहित्य प्रकृति प्रेम को प्रभावी ढंग से संप्रेषित करने का माध्यम बन सकता है।

सारांश

बाल साहित्य बच्चों के मानसिक, भावनात्मक और नैतिक विकास का एक प्रभावशाली माध्यम है। जब इसमें प्रकृति प्रेम को शामिल किया जाता है, तो यह बच्चों को केवल मनोरंजन ही नहीं, बल्कि संवेदनशीलता, जिज्ञासा और पर्यावरणीय जिम्मेदारी भी सिखाता है। पेड़, नदियाँ, पक्षी, और ऋतुएँ जब साहित्य का हिस्सा बनते हैं, तो बच्चे उनके साथ भावनात्मक रूप से जुड़ते हैं।प्राकृतिक तत्वों का चित्रण केवल सौंदर्य तक सीमित न होकर, जीवन मूल्यों और प्रतीकों के रूप में किया जाता है। बाल साहित्य में जब पशु-पक्षी, पेड़ या बादल मानवीय गुणों के साथ प्रस्तुत किए जाते हैं, तो वे बच्चों के मन में आत्मीयता उत्पन्न करते हैं। इसी शैली के माध्यम से बच्चे प्रकृति को मित्र और मार्गदर्शक के रूप में अनुभव करते हैं।प्राकृतिक अनुभव बच्चों में सहानुभूति, करुणा और संतुलन की भावना पैदा करते हैं। शिक्षण प्रणाली में प्रकृति विषयक रचनाओं, प्रकल्पों और गतिविधियों से बच्चों को न केवल ज्ञान प्राप्त होता है, बल्कि वे पर्यावरण के प्रति जागरूक भी बनते हैं।हालाँकि आधुनिक जीवनशैली, औद्योगीकरण और शहरीकरण ने बच्चों को प्रकृति से दूर किया है। डिजिटल माध्यमों और दृश्य-श्रव्य प्रस्तुतियों ने इस दूरी को थोड़ा कम करने का प्रयास किया है, लेकिन पारंपरिक बाल साहित्य में प्रकृति चित्रण की मात्रा घटती जा रही है।इन चुनौतियों के बावजूद, यदि रचनाकार बच्चों की भाषा, भावनाओं और कल्पनाओं को ध्यान में रखकर रचनाएँ करें, तो बाल साहित्य प्रकृति प्रेम और पर्यावरण संरक्षण के संदेश को प्रभावी रूप से पहुँचा सकता है। इससे भावी पीढ़ी संवेदनशील और सजग नागरिक बन सकती है।

ISBN-978-93-49938-50-2

संदर्भ ग्रंथ

1. आव्हाड एकनाथ, तळ्यातला खेळ, अखिल भारतीय साने गुरुजी कथामाला शाखा प्रकाशन, डोंबिवलीप., प्र. सं. 2013, पृष्ठ32
2. मठपती निर्मला, अनमोल वेळ, पार्टनर पब्लिकेशन, विरार प., प्र. सं. 2018, पृष्ठ 18
3. कुमार देवेंद्र, नीलकान, प्रखर प्रकाशन, दिल्ली, प्र. सं. 2022
4. कालरा शकुंतला, हंसते महकते फूल कविता संग्रह, बुक ट्री पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, प्र. सं. 2023
5. तांबे राजीव, ठुस्स भुताटकी आणि इतर कथा दिलीपराज प्रकाशन, पुणे, प्र. सं. 2022
6. आव्हाड एकनाथ, तळ्यातला खेळ कविता संग्रह अखिल भारतीय साने गुरुजी कथामाला शाखा प्रकाशन, डोंबिवलीप., प्र. सं. 2013
7. अंजनीकर भगवान, जंगल जत्रा उपन्यास ज्ञानगंगा प्रकाशन, पुणे, 2010

'आधुनिक हिंदी काव्य साहित्य में पर्यावरण चेतना

शारदा अर्जुन खोमणे

शोध छात्रा

अनुसंधान केंद्र- न्यू आर्ट्स कॉमर्स अँड सायन्स कॉलेज, अहिल्यानगर

संस्थागत संबंधता - सावित्रीबाई फुले पुणे विश्वविद्यालय, पुणे – २८

आधुनिक युग में पर्यावरण का बिघडता रूप वैज्ञानिकों और पर्यावरण विशेषज्ञों की चिंता का सबब बन गया है। आधुनिक हिंदी कवि पर्यावरण चेतना और साहित्य के संबंध को अपने रचनात्मक दृष्टी से उजागर कर जनसाधारण को जागरूक करनें में अपना योगदान देते है।

आज 21 वीं सदी का यह युग विज्ञान और प्राद्यौगिक विकास का युग है। इस युग में जहाँ मानव अपना वर्चस्व स्थापित करते हुए उन्नति के चरमोत्कर्ष पर पहुचा है वही उसके समक्ष समय की कुछ चुनौंतिया भी आ खडी हुई है। पर्यावरण का बिघडता स्वरूप भी एक ऐंसी चुनौती है, जिसका हल करना कठिण सिद्ध हो रहा है। पर्यावरण ऱ्हास और पर्यावरण विनाश नाम से यह मामला अन्य सामाजिक समस्याओं की तरह ही अत्यंत ज्वलंत और विश्व मंच पर छाया हुआ है।

मानव सभ्यता का विकास पर्यावरण की अनुकूल परिस्थितीयों से ही संभव हो पाया है। पर आज मनुष्य के हस्तक्षेप से पर्यावरण को क्षति पहुँची है। मनुष्य ने विकास के अंधाधुंद दौड में भौतिक विकास, औद्योगिकीकरण, विकास योजनाओं के कुप्रबंधन एवं प्रकृति में अनाधिकार हस्तक्षेप से पर्यावरण को हानि पहुंचायी है। जहाँ एक ओर दुनिया भर के वैज्ञानिक एवं पर्यावरण विशेषज्ञ इस कठिण परिस्थिती से जनसाधारण को परिचित करा रहे है, वही साहित्य की भूमिका अपेक्षाकृत और भी अधिक महत्त्वपूर्ण और

ISBN-978-93-49938-50-2

अग्रगामी है। साहित्य समाज का दर्पण ही नही वरन दीपक भी होता है । जो जन- जन की वाणी भी है और जन- जन के लिये प्रेरक भी है। साहित्य अपनी इसी जन निकटता के कारण समाज में सटीक और प्रभावशाली भूमिका निभाता है। इसलिये जब कवि समाज की समस्याओं, विकृतीयों और विद्रुपताओं का वर्णन करता है तो वह सीधा जनसंपर्क का कार्य करता है।

आधुनिक हिंदी कविता पर्यावरण की इस विकट समस्या को जनसाधारण तक पहुँचाकर उसके भीतर प्रकृति संरक्षण भावना को जागृत कर देने का कार्य करती है। पर्यावरण चेतना को जन-जन में भर देने का जो उपक्रम आधुनिक हिंदी कविता मे मिलता है वह अत्यंत महत्वपूर्ण है।

पृथ्वी का पर्यावरण उसका वह घेरा है, जो उसे समस्त गृहों से विशिष्ट बनता हैं। पर्यावरण में हमारे चारों तरफ का वह वातावरण आता है, जो हमारे अस्तित्व को संम्भव बनता है। हमारे चारों और फैला प्रकृति का यह सुंदर दृश्य जिसमें पेड- पौधे, नदी- झरने, समुद्र पहाड आदि आते है। यही हमारा पर्यावरण है, जो विभिन्न घटकों से मिलकर बना है। मानव विकास एक घटक है, जो पर्यावरण से प्रभावित भी होता है। मानव प्रकृति के पंचभूत तत्त्वों से बना है और मृत्यु के पश्चात पृथ्वी में समाहित हो जाता है। इसलिए मानव जीवन की कल्पना उसके पर्यावरण के बहार नहीं की जा सकती।

पर्यावरण को समझने के लिए पहले तो हमें उसका अर्थ देखना पडेगा -

अर्थ -"पर्यावरण शब्द परी + आवरण से मिलकर बना है। परि का अर्थ हे चारों ओर, व्याप्ति, सूचक तथा आवरण का अर्थ है आच्छादन ,घेराव, खोल ढकना"[1]

पर्यावरण की परिभाषा -environment the factors constituting an organisms surrounding the most important being those

component that influence the organisms behaviour reproduction and survival.

"पर्यावरण जीवों के आसपास के परिवेश के उन महत्वपूर्ण कारकों का गठन है, जो उसके व्यवहार, प्रजनन और उसके अस्तित्व को प्रभावित करते है।"[2] भारतीय परंपरा धर्म एवं दर्शन में सदैव प्रकृति के महत्त्व को स्वीकार कर संरक्षण का संदेश दिया है। वेद, पुराण, उपनिषद, गीता में प्रकृति के उपदानों की रक्षा का संदेश प्रसारित किया है। जैन और बौद्ध धर्म में तो पर्यावरण के प्रत्येक तत्त्व के प्रति संवेदनशील व्यवहार की शिक्षा मिलती है। १९वी शताब्दी में Man and Nature, Rape of the Earth जेसी पुस्तकों के प्रकाशन से जनचेतना की एक लहर उत्पन्न हुई। आंतरराष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण चेतना संरक्षण का विविध उपक्रमों से आयोजन होने लगा। भारत में चिपको, बिश्नोई, गंगा, नर्मदा बचाओ जैसे पर्यावरण आंदोलन होने लगे।

आधुनिक हिंदी कविता का सूत्रपात भारत मे अंग्रेजों के आने के बाद हुआ। राजनीतिक अस्थिरता और अंग्रेजी द्वारा संचार साधनों सडक, रेल, डाक के निर्माण से भारत में आधुनिकता की एक लहर उत्पन्न हुई, जिसका प्रभाव साहित्य पर पडना स्वाभाविक था। राजनीति, समाज और साहित्य में एक नवीन चेतना के प्रसार से आधुनिक हिंदी कविता का उदय हुआ आधुनिक हिंदी कवियों ने विज्ञान और तंत्रज्ञान के नए-नए अविष्कार, मानव की बुद्धिमत्ता और विकास का परिचय दिया है। तो वहीं पर्यावरण का भयावह रूप भी मानव के सामने लाते है। आज मानव के सामने पर्यावरण चेतना के संबंधी बहुत सारी चुनौतियाँ हैं।

पॉलिथीन के वातावरण पर घातक परिणाम

मनुष्य ने अपने आवश्यकताओं के लिए तरह-तरह के आविष्कार किए। अपने लिए तो वह लाभकारी है। किंतु पर्यावरण के लिए हानिकारक सिद्ध हो रहे हैं। मानव का

ISBN-978-93-49938-50-2

ऐसा ही एक आविष्कार प्लास्टिक है। कवि ज्ञानेंद्रपति इस अविष्कार से बेहद नाराज है और अपननी यही नाराजगी इस प्रकार व्यक्त करते हैं।

"पॉलिथीन, पॉलिथीन
तंग हूं मैं इस पॉलिथीन से
तंग पड़ती जा रही है जीवों को धरती पर
बीजों को धरती पर
इसके कारण
चिरजीवा मरजीवा पॉलिथीन
हमारे समय की सभ्यता का पर्याय है।
हमारे समय की सभ्यता का दूसरा नाम है पॉलिथीन।"[3]

इस तरह पॉलीथीन कचरा जहाँ हमारे प्राकृतिक दृश्य को खराब करता है, वही कभी भी विघटित न होने के कारण जीवों के लिए घातक सिद्ध होता जा रहा है। भारतेंदु युग, व्दिवेदी युग, छायावाद, प्रगतीवाद, प्रयोगवाद, नईकविता, अकविता, साठोत्तरी कविता, समकालीन कविता इस तरह से आधुनिक कविता एक व्यापक एवं विस्तृत जीवनदृष्टी है, जिसमें समय- समय पर उनके परिवर्तन होते गये।

जैसे 1 -आधुनिक युग में पर्यावरण के घातक बदलावों का चित्रण कवि कैलाश बाजपेयी पर्यावरण की भयावह चुनौतियों को अपने काव्य के माध्यम से यू हमारे सामने रखते हैं।

जैसे -"इक्कीसवीं सदी की शुरुआत पर
ध्रुवों ने शुरू कर दिया है पिघलना
आकाश भी अब निरापद नहीं रहा
हवा को जरूर श्वास रोग हो चला है

लगता है मुश्किल हो चुका भीड़ छांटना
अब किसी के बस की बात नहीं
धरती को उसूर होने से बचने की।"

धरती के इस तरह गर्मानें से हिमशिखर पिघलने लगे हैं। आकाश भी प्रदूषण से निरापद नहीं रहा। दिनभर धुआँ उगते उद्योग और वाहन हवा विषाक्त कर रहे हैं। निरंतर बढ़ती जनसंख्या पर्यावरण को खतरे की ओर ले जा रही है। अम्लीय वर्षा, कीटनाशक और रसायन के फवारने से जमीन बंजर बना रही है।

वायु प्रदूषण:

वायु प्रदूषण से पर्यावरण असंतुलन के गंभीर समस्या उत्पन्न हुई है। वातावरण में जब दुआ, धूल, दुर्गंध और अन्य हानिकारक गैसें फैलती है तो वायु प्रदूषण हो जाता है। जो मनुष्य जीव और पेड़ पौधों को नुकसान पहुंचती है। वायु प्रदूषण के अनेक कारण है पर उसमें से उद्योग धंधे प्रमुख कारण है कारखाने से निकली जहरीली गैस हवा की शुद्धता समाप्त कर रहे हैं।

"सूख रहा है अंबर को
बलखाता भट्टे का धुआँ "

आज प्रकृति में बसे नगरों में फैलते उद्योग कारखाने के चिमनियों से निकलने वाला धुआँ जो चौमुखी विनाश को आमंत्रित कर रहा है।

ध्वनि प्रदूषण:

आज आधुनिक युग में बढ़ते औद्योगीकरण की वजह से पर्यावरण संतुलन में मुख्यतः वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण तो है ही परंतु आजकल ध्वनि प्रदूषण बहुत बड़ी समस्या मानव के सामने उत्पन्न हुई है। इस संदर्भ में कवि कुंवर नारायण अपने पर्यावरण कविता में लिखते हैं

ISBN-978-93-49938-50-2

"सड़कों की उजागर लपेट में मकान

आ गया ,आ गया चीख रहे प्रेशर हॉर्न

सबको है खुली छूट हल्लों का मुहल्ला है

अपना सिर गेंद लाउडस्पीकर बल्ला है

राम और अल्लाह के बंदों का जंगल है

कानपुर आवाजों में अखंड दंगल है।"

बढ़ती आबादी से शहरों में मकान संकुचित होते जा रहे हैं। सड़कों पर दिन रात वाहन उनके हॉर्न के आवाज वातावरण को अशांत कर रहे हैं। मंदिर और मस्जिदों में लगे लाउडस्पीकर शोर कर रहे हैं यह शोर शराबा सिर्फ मनुष्य के लिए नहीं तो सभी प्राणी मात्राओं के लिए भी हानिकारक है।

सारांश

इस तरह से आधुनिक हिंदी कविता एक अत्यंत व्यापक एवं अति विस्तृत जीवनदृष्टी हैं। जिसमें समय- समय पर अनेक परिवर्तन होते गये। परिवर्तनों के साथ - साथ भिन्न- भिन्न युगों में कविता का एक अलग ही रूप हमारे सामने प्रस्तुत होता रहा। उन कविताओं मे पर्यावरण चेतना के बिंदू उभरते नजर आए हैं। पर्यावरण चेतना से पर्यावरण संरक्षण के लिये प्रेरित करते है।

संदर्भ

1. मानव मूल्यपरक शब्दावली का विश्वकोश तृतीय खंड धर्मपाल मैनी नई दिल्ली: स्वरूप अँड संन्ज (2005) पृ.1059-60
2. एस. पी. अग्रवाल एन्व्हायरमेंट स्टडीज नई दिल्ली: नरोसा पब्लिशिंग हाऊस

(2006) पृ.2

3. पत्रिका, प्रगतिशील वसुधा, अप्रैल – जून, 2008, पृ. 104
4. बाहरी कडियॉ - वेबसाईट, गुगल सर्च

ISBN-978-93-49938-50-2

विनोद कुमार शुक्ल के उपन्यास "दीवार में एक खिड़की रहती थी" में पर्यावरण चेतना

किरण पुणेकर

शोध छात्र

दादा पाटील महाविद्यालय कर्जत, जि-अहिल्यानगर

प्रस्तावना

विनोद कुमार शुक्ल समकालीन हिंदी साहित्य के एक अत्यंत विशिष्ट और संवेदनशील रचनाकार हैं। उनका जन्म 1 जनवरी, 1937 को मध्यप्रदेश के राजनांदगांव में हुआ था। उन्होंने विज्ञान में स्नातकोत्तर शिक्षा प्राप्त की, लेकिन उनकी रचनात्मक चेतना मुख्यतः कविता, कथा और उपन्यास लेखन में सक्रिय रही है। उनकी लेखनी में प्रकृति, मनुष्य की आंतरिक अनुभूतियाँ और जीवन की सूक्ष्मतम अनुभूतियों को अत्यंत सहज भाषा और प्रतीकों में अभिव्यक्त किया गया है। शुक्ल जी की भाषा-शैली अत्यंत काव्यात्मक, चित्रात्मक और प्रयोगधर्मी मानी जाती है। उनके प्रमुख काव्य संग्रहों में'लगभग जय हिन्द', 'सब कुछ होना बचा रहेगा'और उपन्यासों में'नौकर की कमीज़', 'दीवार में एक खिड़की रहती थी'प्रमुख हैं। वे मृदुभाषी, चिंतनशील और एकांतप्रिय लेखक हैं, जिनकी लेखनी में प्रकृति और मनुष्य के बीच के आत्मीय संबंध को अत्यंत सूक्ष्मता से चित्रित किया गया है।शुक्ल ने उपन्यास एवं कविता विधाओं में साहित्य सृजन किया है। उनकी पहली कविता संग्रह 1971 में ‘लगभग जय हिन्द’ नाम से प्रकाशित हुआ। 1979 में ‘नौकर की कमीज़’ नाम से उनका उपन्यास आया जिस पर फ़िल्मकार मणिकौल ने इसी से नाम से फिल्म भी बनाई। शुक्ल के दूसरे उपन्यास ‘दीवार में एक खिड़की’ को साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हो चुका है।शुक्ल को

भारतीय साहित्य के सर्वोच्च सम्मान ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किए जाने की घोषणा हुई है।1 जनवरी, 1937 को भारत के राज्य छत्तीसगढ़ के राजनंदगांव में हुआ। जन्मे शुक्ल ने अध्यापन को रोज़गार के रूप में चुनकर पूरा ध्यान साहित्य सृजन में लगाया।विनोद कुमार शुक्ल हिंदी साहित्य के एकप्रमुख समकालीन कवि, कथाकार और उपन्यासकार हैं, जिनका लेखन अपनी सरलता, गहन संवेदना और मौलिक अभिव्यक्ति शैली के लिए पहचाना जाता है। विनोद कुमार शुक्ल का लेखन धैर्य, आत्मीयता और सूक्ष्म निरीक्षण से परिपूर्ण होता है। वे उन दुर्लभ लेखकों में हैं जो सामान्य जीवन की साधारण घटनाओं को असाधारण गहराई से प्रस्तुत करते हैं। उनका शिल्प धीमा, मगर अत्यंत प्रभावशाली है। वे भाषा की चमत्कारी सादगी के लिए प्रसिद्ध हैं। उनकी रचनाओं में अक्सर प्रकृति, मौन, समय और स्मृति की प्रमुख भूमिका होती है। वे एकदृश्य और मनोवैज्ञानिक वातावरण रचते हैं जिसमें पाठक धीरे-धीरे उतरता है।

कविता संग्रह

‘लगभग जयहिंद ' वर्ष 1971.

‘वह आदमी चला गया’, ‘नया गरम कोट पहिनकर विचार की तरह’ वर्ष 1981.

‘सब कुछ होना बचा रहेगा’ वर्ष 1992.

‘अतिरिक्त नहीं’ वर्ष 2000.

‘कविता से लंबी कविता’ वर्ष 2001.

‘आकाश धरती को खटखटाता है’ वर्ष 2006.

‘पचास कविताएँ’ वर्ष 2011

‘कभी के बाद अभी’ वर्ष 2012.

‘कवि ने कहा’ -चुनी हुई कविताएँ वर्ष 2012.

‘प्रतिनिधि कविताएँ’ वर्ष 2013.

ISBN-978-93-49938-50-2

उपन्यास

‘नौकर की कमीज़’ वर्ष 1979.

‘खिलेगा तो देखेंगे’ वर्ष 1996.

‘दीवार में एक खिड़की रहती थी’ वर्ष 1997.

‘हरी घास की छप्पर वाली झोपड़ी और बौना पहाड़’ वर्ष 2011.

‘यासि रासात’ वर्ष 2017.

‘एक चुप्पी जगह’ वर्ष 2018.

कहानी संग्रह

‘पेड़ पर कमरा’ वर्ष 1988.

‘महाविद्यालय’ वर्ष 1996.

‘एक कहानी’ वर्ष 2021.

‘घोड़ा और अन्य कहानियाँ’ वर्ष 2021.

कहानी/कविता पर पुस्तक

‘गोदाम’, वर्ष 2020.

‘गमले में जंगल’, वर्ष 2021.

कृतियों के अनुवाद

‘The Servant’s Shirt’, Year 1999 (Novel)

‘A Window Lived In The Wall’, Year 2005 (Novel)

‘Once It Flowers’, Year 2014 (Novel)

‘Moonrise From The green Grass Roof’, Year 2017 (Novel)

‘Blue Is Like Blue’ Year 2019 (Stories Collection)

‘The Windows in Our House Are Little Doors’ Year 2020 (Novel)

उपन्यास 'नौकर की कमीज़' का फ्रेंच सहित प्रमुख भारतीय भाषाओं में अनुवाद /प्रकाशन।

उपन्यास 'दीवार में एक खिड़की रहती थी' का प्रमुख भारतीय भाषाओं में अनुवाद /प्रकाशन।

कविताओं का एक संग्रह इतालवी में।

कविताओं के स्वीडिश, जर्मन, अरबी, अंग्रेजी सहित प्रमुख भारतीय भाषाओं में अनुवाद।

पेड़ पर कमरा ' कहानी संग्रह का मराठी, अंग्रेजी में अनुवाद

अन्य कृतियाँ

बच्चों की कविताओं के पोस्टकार्ड प्रकाशित, वर्ष 2020.

'गजानन माधव मुक्तिबोध फेलोशिप' (म.प्र. शासन)

'रज़ा पुरस्कार' (मध्यप्रदेश कला परिषद)

'शिखर सम्मान' (म.प्र. शासन)

'राष्ट्रीय मैथिलीशरण गुप्त सम्मान' (म.प्र. शासन)

'दयावती मोदी कवि शेखर सम्मान' (मोदी फाउंडेशन)

'साहित्य अकादमी पुरस्कार', (भारत सरकार)

'हिन्दी गौरव सम्मान' (उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, उ.प्र. शासन)

'मातृभूमि' पुरस्कार, वर्ष 2020 (अंग्रेजी कहानी संग्रह 'Blue Is Like Blue' के लिए)

'साहित्य अकादमी,' नई दिल्ली के सर्वोच्च सम्मान "महत्तर सदस्य" चुने गये, वर्ष 2021.

कृतियों पर कार्य

उपन्यास 'नौकर की कमीज़' एवं कहानी 'बोझ' पर विख्यात फिल्मकार मणिकौल द्वार फिल्म का निर्माण वर्ष 1999, फिल्म 'केरल अंतरराष्ट्रीय फिल्म समारोह ' में पुरस्कृत।

ISBN-978-93-49938-50-2

कहानियाँ 'आदमी की औरत' एवं 'पेड़ पर कमरा' पर राष्ट्रीय फिल्म इंस्टीट्यूट, पूना द्वारा अमित दत्ता के निर्देशन में फिल्म का निर्माण। फिल्म वेनिस अंतरराष्ट्रीय फिल्म समारोह 2009 में 'स्पेशल मेनशन अवार्ड' से सम्मानित।

उपन्यास 'दीवार में एक खिड़की रहती थी' पर प्रसिद्ध नाट्य निर्देशक मोहन महर्षि सहित अन्य रचनाओं पर निर्देशकों द्वारा नाट्य मंचन।

अन्य उपलब्धियाँ

'निराला सृजन पीठ', भारत भवन, भोपाल में रहे थे।

'साहित्य अकादमी', नई दिल्ली के सदस्य रहे।

वर्ष अप्रैल 2013 से अप्रैल 2014 में वे 'अतिथि लेखक (राइटर इन रेसीडेंस), महात्मा गाँधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र,.

वर्ष 2023 का पैन-नाबोकोव पुरुस्कार मिला है

विनोद कुमार शुक्ल ने हिंदी साहित्य में धीमे स्वर की संवेदनशीलता को प्रतिष्ठा दिलाई। वे विकल्प हीनता और उम्मीद, संवेदना और साधारणता, तथा आंतरिक जीवन और बाहरी संसार के द्वंद्व को अत्यंत काव्यात्मक और अनोखे ढंग से प्रस्तुत करते हैं।

उनकी कृतियों में पर्यावरण चेतना, नैतिक चिंतन, और आधुनिकता की आलोचना एक शांत लेकिन स्थायी प्रभाव के साथ प्रकट होती है। विशेष रूप से 'दीवार में एक खिड़की रहती थी' में प्रकृति और चेतना का गहरा अंतर्संबंध दिखाई देता है।

सम्मान और पुरस्कार

साहित्य अकादमी पुरस्कार (2023) – "दीवार में एक खिड़की रहती थी" के लिए विनोद कुमार शुक्ल हिंदी कविता के वृहत्तर परिदृश्य में अपनी विशिष्ट भाषिक बनावट और संवेदनात्मक गहराई के लिए जाने जाते हैं। उन्होंने समकालीन हिंदी कविता को अपने मौलिक कृतित्व से सम्पन्नतर बनाया है और इसके लिए वे पूरे भारतीय काव्य

परिदृश्य में अलग से पहचाने जाते हैं।उनकी एकदम भिन्न साहित्यिक शैली ने परिपाटी को तोड़ते हुए ताज़ा झोकें की तरह पाठकों को प्रभावित किया, जिसको 'जादुई-यथार्थ' के आसपास की शैली के रूप में महसूस किया जा सकता है।वे कवि होने के साथ-साथ शीर्षस्थ कथाकार भी हैं। उनके उपन्यासों ने हिंदी में पहली बार एक मौलिक भारतीय उपन्यास की संभावना को राह दी है। उन्होंने एक साथ लोक आख्यान और आधुनिक मनुष्य की अस्तित्वमूलक जटिल आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति को समाविष्ट कर एक नये कथा-ढांचे का आविष्कार किया है। अपने उपन्यासों के माध्यम से उन्होंने हमारे दैनंदिन जीवन की कथा-समृद्धि को अद्भुत कौशल के साथ उभारा है। मध्यवर्गीय जीवन की बहुविध बारीकियों को समाये उनके विलक्षण चरित्रों का भारतीय कथा-सृष्टि में समृद्धिकारी योगदान है। वे अपनी पीढ़ी के ऐसे अकेले लेखक हैं, जिनके लेखन ने एक नयी तरह की आलोचना दृष्टि को आविष्कृत करने की प्रेरणा दी है। आज वे सर्वाधिक चर्चित लेखक हैं। अपनी विशिष्ट भाषिक बनावट, संवेदनात्मक गहराई, उत्कृष्ट सृजनशीलता से श्री शुक्ल ने भारतीय वैश्विक साहित्य को अद्वितीय रूप से समृद्ध किया है।

विनोद कुमार शुक्ल का उपन्यास 'दीवार में एक खिड़की रहती थी' सन् 1997 ई. में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में एक निजी महाविद्यालय में व्याख्याता के रूप में कार्यरत रघुवर प्रसाद की जिन्दगी का कस्बाई यथार्थ है। सीमित आय में वह अपना और अपने परिवार का गुजारा करते हैं हैं। किराये का कमरा, महाविद्यालय जाने की असुविधा, माता-पिता की बीमारियाँ आदि से वह जूझते हैं। उपन्यास के केन्द्र में निम्नवर्गीय रघुवर प्रसाद और सोनसी का दाम्पत्य जीवन है। सोनसी से शादी होने के बाद वह अपने जीवन-संग्राम में जूझते रहते है। इस संदर्भ में विष्णु खरे लिखते हैं–"विनोद कुमार शुक्ल के इस उपन्यास में कोई महान घटना, कोई विराट संघर्ष, कोई युगीन सत्य

ISBN-978-93-49938-50-2

तथा कोई उद्देश्य या संदेश नहीं क्योंकि इसमें वह जीवन है, जो इस देश की वह जिन्दगी है, जिसे किसी अन्य उपयुक्त शब्द के अभाव में निम्नमध्यवर्गीय कहा जाता है।"

विनोद कुमार शुक्ल की साहित्यिक दृष्टि

विनोद कुमार शुक्ल का लेखन सरल, संवेदनशील और गहन मानवीय अनुभवों से युक्त होता है। वे आम जीवन की छोटी-छोटी घटनाओं के माध्यम से बड़े सत्य उजागर करते हैं। उनका दृष्टिकोण प्रकृति के प्रति आत्मीय है, जहाँ खिड़की एक प्रतीक बन जाती है प्रकृति से जुड़ने का।

5. उपन्यास में पर्यावरणीय संकेत

'दीवार में एक खिड़की रहती थी' में खिड़की प्रतीक है उस दृष्टि का जो मनुष्य को बाहरी संसार से जोड़ती है। यह उपन्यास उस संवेदनशीलता को दर्शाता है जो एक सीमित शहरी जीवन के भीतर भी प्रकृति के प्रति गहराई से जुड़ी रहती है। उपन्यास में अनेक ऐसे बिंब और प्रतीक हैं जो पर्यावरणीय चेतना को व्यक्त करते हैं — जैसे कि दीवारें, आंगन, खिड़की, रोशनी, छाया, आदि।

6. प्रकृति और मनुष्य का संबंध

लेखक ने प्रकृति को केवल पृष्ठभूमि के रूप में नहीं, बल्कि जीवंत उपस्थिति के रूप में प्रस्तुत किया है। पात्रों की संवेदनशीलता, उनके देखने और सोचने के ढंग में प्रकृति के प्रति गहरा लगाव दिखाई देता है।

7. शहरीकरण और उसके प्रभाव

उपन्यास में शहरी जीवन की एकरसता, सीमितता और बंद वातावरण की आलोचना की गई है। खिड़की उस एकमात्र माध्यम के रूप में सामने आती है जिससे बाहर की दुनिया देखी जा सकती है। यह शहरीकरण के कारण सिकुड़ते प्राकृतिक स्पेस की ओर संकेत करती है।

प्रसिद्ध समीक्षक डॉ. नामवर सिंह कहते है–"'दीवार में एक खिड़की रहती थी' उपभोक्ता समाज में एक प्रति संसार की रचना करता है। इस यांत्रिक जीवन के विरूद्ध एक मिठास गरमाई का आभास खिड़की के बाहर कराता हैं। मैं चकित हूँ कि यह उपन्यास के भाँति छोटी-मोटी बातें, रोजमर्रा के ब्यौरे यहाँ भी हैं। मैं इस उपन्यास के शिल्प से भी प्रभावित हूँ।"

यह उपन्यास सीधी-सादी, आंचलिक प्रेम कहानी हैं, जिसमें निम्नमध्यवर्गीय समाज के जीवन के ठंडे-मीठे रसीले मन को प्रकृति के खूबसूरत धागे में पिरोया गया हैं। इस उपन्यास में भाषा से एक सपनों का संसार रचा गया हैं। स्वयं विनोद कुमार शुक्ल ने एक इंटरव्यू में कहा–"किसी भी लेखक का शब्दों के साथ खेलने का संबंध तो बनता ही नहीं, जूझने का बनता है।" इस उपन्यास में दाम्पत्य रूपी घर में पति रघुवर प्रसाद 'दरवाजे' की तरह है तो पत्नी सोनसी 'खिड़की' की तरह। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। उपन्यास में खिड़की की दुनिया भले फैंटेसी की दुनिया हो पर प्रेम और श्रृंगार के यह दृश्य और उनका वर्णन एकदम सहज और स्वाभाविक है। उपन्यास की मुख्य कथा निम्नमध्यवर्गीय दम्पति रघुवर प्रसाद और सोनसी के प्रेम-आख्यान है। वे दोनों इस खिड़की से एक अद्भुद चमत्कार की दुनिया में प्रवेश करते हैं और वहीं से अपने जीवन के सपने संजोते हैं।

'दीवार में एक खिड़की रहती थी' उपन्यास भारतीय निम्नमध्यवर्गीय जीवन संघर्ष के भीतर छिपे जीवन के सुख है। सारे बंधनों से मुक्त वे जीवन का सही आनंद लेते हैं। वे दोनों ऐसी दुनिया में हैं जिसमें सिर्फ दोनों की मौजूदगी का एहसास है। सोनसी रघुवर प्रसाद के लिए एक नई सुबह थी। रघुवर प्रसाद तालाब के किनारे सोनसी के सौन्दर्य को निहारते हैं–"पत्थर पर खड़ी वह इतनी मांसल और ठोस थी कि लगता था कि एक भी कदम आगे बढ़ाएगी तो तालाब का सारा पानी एक उछाल लेगा। तत्काल हृदय में हुए

ISBN-978-93-49938-50-2

उलकापात के पत्थर की गढ़ी प्रतिमा का ठोसपन और दूर से गर्म लगता था। जब उसने साड़ी को जाँघ तक खोंसा तो लगा कि पत्थर चन्द्रमा का होगा या बृहस्पति का। अगर चन्द्रमा का होगा तो रंग पत्थर का ऐसा ही था जैसा चन्द्रमा दूर से दिखता है सुबह।" छुट्टी के दिनों में जब भी उन्हें फुर्सत मिलती रघुवर प्रसाद और सोनसी के उस दुनिया में रहती बूढ़ी अम्मा अपने बच्चों जैसा प्यार करती है और उन्हें अपने हाथों से चाय पिलाती है। उसकी चाय उन्हें बहुत अच्छी लगती है। दोनों तालाब के खिले हुए कमल में घुसकर नहाने लगे। उनके नहाने से सफेद कमल के फूलों की संख्या भी बढ़ गई है। इतने में बूढ़ी अम्मा आकर आवाज देती है–"बाहर आ जाओ कमल में फँस जाओगे।" यहाँ विनोद कुमार शुक्ल ने बहुत ही खूबसूरती के साथ कल्पना और यथार्थ का मिश्रण किया है कि पता नहीं चलता कब स्वप्न-युग में है। उपन्यास में–"बूढ़ी अम्मा प्रकृति-माँ की तरह हैं। खिड़की की दुनिया पर उनका पूरा नियंत्रण है। वह बन्दरों को डाँट सकती हैं, पक्षियों को पत्थर पर बीट करने के लिए गुस्से में घूर सकती है। यहां तक कि वह रघुवर प्रसाद और सोनसी को भी स्नेह भरी डाँट पिला देती हैं।"

रघुवर प्रसाद के कमरे की खिड़की के बाहर प्रकृति का मनमोहक सौन्दर्य भरा हुआ है। उनको जब भी समय मिलता है वह और उनकी पत्नी सोनसी खिड़की से कूदकर एक अलग ही दुनिया में चले जाते हैं। वे इस संबंध को सौन्दर्य से सम्पृक्त कर देते हैं। रघुवर प्रसाद के लिए सोनसी ऐसी है जिसे बार-बार देखें तो एक नयापन है। सोनसी रघुवर प्रसाद के लिए एक नई सुबह है। वह भी उस अलग दुनिया में रघुवर प्रसाद के साथ जाकर प्रकृति के सौन्दर्य का भरपूर आनंद लेती है। उपन्यास में 'खिड़की' प्रेम की दुनिया में ले जाती है। रघुवर प्रसाद के मन में प्रेम की खिड़की खोलने का काम सोनसी करती है। उसके जीवन में सोनसी हवा के झोंकों की तरह आती है और उसके मन को हरा-भरा रखती है। सोनसी की सुन्दरता, रघुवर प्रसाद और उसके बीच प्रेम संबंध को

चित्रित करते समय प्रकृति माध्यम बनती है। विनोद कुमार शुक्ल लिखते हैं–"एकदम सुबह का सूर्य बाईं तरफ तालाब में था। सूर्य के बाद तालाब में रघुवर प्रसाद थे, फिर सोनसी थी। सोनसी डुबकी से निकलते ही बालों को पीछे झटकारती तो एक अर्धचक्र बनाती बूँदे बालों से उड़ती तब रघुवर प्रसाद को बूँदों की तरफ इन्द्रधनुष दिखाई देता। सोनसी के गीले बालों को झटकारने से क्षण भर को इद्रधनुष बन जाता था।" खिड़की की दुनिया में रघुवर और सोनसी के मन और उनकी आकांक्षाओं की दुनिया की तस्वीरें हैं। इनके प्रेम में नोक-झोंक, तनाव, चिंता, प्रेम, रूठना, मनाना इन सब से उपन्यास अधिक निखरा है। संबंध उतनी ही गहराई संवेदना, अंतरमन की अभिव्यक्ति के स्तर पर उनकी ही भाषा में प्रस्तुत है। पति-पत्नी के बीच बातचीत, खामोशी में आँखों के द्वारा चलने वाला बातचीत, ये सब एक दूसरे के प्रति आत्मीयता स्थापित करता है।वास्तव में खिड़की की दुनिया रघुवर प्रसाद और सोनसी के प्रेम, मन और प्रकृति से लगाव की दुनिया है। उस दुनिया में एक सुंदर नदी बहती है। यह नदी स्वच्छ और कम गहरी है। बरसात के समय इसमें बाढ़ नहीं आती। इस बीच हवा सोनसी की साड़ी उड़ाकर ले जा रही है। हवा में उड़कर जाती हुई रंगोली ने उसे ढाँक लिया था। हवा जब थम गई तो पेड़ों, फूलों, दूबों की गन्ध जो फैल गई थी वह पेड़ों, फूलों और दूबों के आसपास सिमटने लगी। बरगद के पेड़ के पास ही वहाँ तीज त्यौहारों के दिन की पूजा स्थल की सुगन्ध हैं। पेड़ का तना एकदम काला चिकना है। वहाँ एक शिवलिंग का पेड़ है। गोबर से लिपी-पुती जगह पर, पेड़ के नीचे सोनसी आँख बंद किए लेटी थी। सोनसी को जान-बुझकर रघुवर प्रसाद का आना मालूम नहीं हो रहा है। वह इन सब से अनजान दिखी तभी सोनसी की बाई बाँह पर टाएं-टाएं करता एक पक्षी आकर बैठा। बरगद का पेड़, फूल, फूलों का सुगन्ध, बन्दर और बच्चे हैं। साथ में रंग है। बकरी के बच्चे भी हैं। सूर्योदय, सूर्यास्त, चन्द्र और ध्वनियों के साथ प्रकृति उपस्थित है। यह सब रघुवर प्रसाद के मन की जगह है।

ISBN-978-93-49938-50-2

गोबर से लिपी पगडण्डी मन की पगडण्डी थी। “पगडण्डी को मालूम था इसलिए वह रघुवर प्रसाद के चलने के रास्ते पर थी। रघुवर प्रसाद को टीले पर आना था। इसलिए जहाँ रघुवर प्रसाद आये थे वह टीले पर था। तालाब रघुवर प्रसाद के निहार में था। तालाब में तारों, चन्द्रमा की परछाई पड़ी कि रघुवर प्रसाद के निहार में हो। जुगनू रघुवर प्रसाद के सामने से होकर गए। कमल के फूल रघुवर प्रसाद को दिखने के लिए चन्द्रमा के उजाले में थे।” बिष्णु खरे का कहना है–“एक सुखदतम अचंभा यह है कि इस उपन्यास में अपने जल, चट्टान, पर्वत, वन, वृक्ष, पशुओं, पक्षियों, सूर्योदय, सूर्यास्त, चन्द्र, हवा, रंग, गंध और ध्वनियों के साथ प्रकृति उपस्थित हो जितनी फणीश्वरनाथ रेणु के गल्प के बाद कभी नहीं रही।” वस्तुत: यह उपन्यास एक सांस्कृतिक परिघटना की तरह है। इस उपन्यास में गाँव में रहने वाले आम लोगों के जीवन की सच्चाई को लेखक ने आवेगपूर्ण और संवेदना में ढाला है। निम्नमध्यवर्गीय परिवार में घर, प्रकृति और परिवेश के छोटे-छोटे अनुभवों के प्रति लगाव रखना ही लेखक की जीवन दृष्टि रही है।

निष्कर्ष

आधुनिक हिंदी निबंध साहित्य में पर्यावरण चेतना एक महत्वपूर्ण विषय है, जो लेखकों को आकर्षित करता है। पर्यावरण चेतना के विभिन्न पहलुओं को दर्शाया गया है, जैसे कि प्रकृति का महत्व, पर्यावरण प्रदूषण और जलवायु परिवर्तन। आधुनिक हिंदी निबंध साहित्य में पर्यावरण चेतना के महत्व को उजागर करने से हमें पर्यावरण के प्रति जागरूक और संवेदनशील बनाने में मदद मिलती है।

"दीवार में एक खिड़की रहती थी" उपन्यास एक महत्वपूर्ण साहित्यिक कृति है, जो निम्नमध्यवर्गीय जीवन के संघर्षों और प्रेम की कहानी को दर्शाती है। उपन्यास की सरल और प्रभावशाली भाषा, कल्पना और यथार्थ का मिश्रण, और प्रेम और संबंधों का चित्रण इसे एक अद्वितीय और आकर्षक बनाते हैं।

संदर्भ :

1. डॉ. कृष्णदेव शर्मा, कविवर सुमित्रानंदन पंत और उनका आधुनिक कवि, रीगल बुक डिपो, दिल्ली
2. निर्मल वर्मा, शब्द और स्मृति, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2017
3. विष्णु खरे, अनुकथन
4. सं. राजेन्द्र यादव, हँस, मासिक, जनवरी – 1999
5. विनोद कुमार शुक्ल, दीवार में एक खिड़की रहती थी , वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2014
6. योगेश तिवारी, विनोद कुमार शुक्ल : खिड़की के अन्दर और बाहर, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पहला संस्करण 2013

ISBN-978-93-49938-50-2